www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

मार्च 2012

प्रेम और सौहार्द का पर्व होली

अंगुलियों में निहित मूल्यवान रहस्य

स्वामी विवेकानंद का जीवन दर्शन

प्रेममयी मीरा के गीतों का मर्म

VASU CREATION

B-4/1626, RAI BAHADUR ROAD, LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS

—: SPECIALISTS IN :—

LONG KURTA ❖ 3PC SET ❖ MATERNITY WEAR ❖ JIM WEAR ❖ CAPRI SET & SLEX SUIT

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 3 अंक : 2

मार्च 2012, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
अशोक कोठारी
अध्यक्ष: सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

कला एवं साज-सज्जा
महेन्द्र बोरा
(9910406059)

सलाहकार मंडल
दीपक रथ, दीपक जैन-भायंदर,
अशोक एस. कोठारी, दिनेश बी. मेहता,
निकेश एम. जैन, कुशलराज बी. जैन,
नवीन एस. जैन, श्रेणिक एम. जैन-मुंबई,
बिन्दू रायसोनी,
चंदू वी. सोलंकी-बैंगलौर,
मुकेश अग्रवाल-दिल्ली,
विपिन जैन-लुधियाना

वितरण व्यवस्थापक
बरुण कुमार सिंह
+91-9968126797, 011-29847741

: शुल्क :
वार्षिक: 300 रु.
दस वर्षीय: 2100 रु.
पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अर्पाटमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

सुखी परिवार की दिशाएं

प्रत्येक व्यक्ति आज सारी नैतिकता को ताक पर रखकर काला धन एकत्र कर उसे यथाशक्ति सफेद करने में व्यस्त है। फलतः सीमित परिवारों में भी परस्पर सौहार्द, सहयोग एवं प्रेम तथा सामंजस्य का अभाव होता जा रहा है।

-गणि राजेन्द्र विजय

7		
6	धर्म, पाप और पुण्य	वल्लभ उवाच
6	तब तक न रुको जब तक मंजिल न मिले	स्वामी विवेकानंद
9	अंगुलियों में निहित मूल्यवान रहस्य	विवेक शुक्ल
10	प्रसन्न व्यक्ति का हृदय भी स्वस्थ रहता है	डॉ. के. के. अग्रवाल
11	जब अंजना के दूध से पहाड़ फट गया	नरेन्द्र देवांगन
12	साधना का प्रथम द्वार मौन	साध्वी अणिमाश्री
13	जीवन को जीना सीखिए	नीना राठौड़
13	रोगनाशक है अंकुरित भोजन	मुरली कांठेड़
14	मनुष्य पर रंगों का प्रभाव	आचार्य महाप्रज्ञ
15	न्यारी महिमा नाम की	जगजीत सिंह
16	प्रेम और सौहार्द का पर्व होली	गणेश मुनि शास्त्री
17	गणि राजेन्द्र विजय एक प्रेरक व्यक्तित्व	रूपनारायण काबरा
18	एक उपचार है टहलना	डॉ. सरयूदेवी लोया
19	उत्कोच दान माना जाता था घूस को	आचार्य विद्यानंद
19	भोजन कैसा हो	रिखबचंद जैन
20	कामधेनु है गाय	दीपक कुमार घोष
21	भाग्य जगाएं फेंगशुई से	रामेश्वर प्रसाद
22	नारी: राष्ट्र का भविष्य-विकास की क्रांति	साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा
23	अपनी मर्जी के मालिक बनो	आचार्य सुदर्शन
26	पवित्र वनस्पति है कुंकुम	नरेश चन्द्र तिवारी
27	प्रेममयी मीरा	शुभदा पांडेय
28	भक्ति और ज्ञान की धारा: विष्णुपुराण	डॉ. कल्याण प्रसाद वर्मा
28	जीरा एक गुण अनेक	मूलनारायण मालवीय वैद्य
29	विषम परिस्थितियों में सहजता जरूरी है	मंजुला जैन
30	वृद्धजनों की दुर्दशा-वेदों में क्या है हल?	भारत भूषण
31	क्या होता है मरने के बाद	श्रीगोपाल नारसन
32	अंगूर: एक औषधि	श्री नेथेलियन विलियम्स्
33	गंगाजल: आयुर्वेदिक औषधि	के. सुलोचना
33	नीम के विभिन्न उपयोग	प्रभा जैन
34	लिखावट और स्वास्थ्य	उमेश पाण्डे
35	प्रभावी संवाद-सभी करें याद	डॉ. विनोद सोमानी 'हंस'
36	जप के लिए 108 दानों की माला क्यों?	ज्योतिषाचार्य प्रवीण सोनी
36	उदास होते हैं खुशी का ढोल पीटने वाले	मिलान कुंदेरा
38	जीवन में बांसुरी की भूमिका	पं. दयानंद शास्त्री
39	माता-पिता हमारे सर्वप्रथम गुरु हैं	भक्ति विचार विष्णु महाराज
40	Surrender and love are synonymous	Sri Sri Ravishankar
40	Instruments of peace	Dadi Janki
41	What you see or don't see	Sri Sri Anandamurti
41	Forgiveness is divine	Gani Rajendra Vijay
42	जन-जन की आस्था का केन्द्र: छोटी देवकाली	डॉ. उषा अरोड़ा
45	आप क्या हैं? कभी सोचा!	आचार्य चंदनमुनि
46	सबके लिए जीने का क्या सुख है	मनीष जैन

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका का दिसम्बर-2011 अंक मिला। अत्यंत आकर्षक एवं बौद्धिक विचारों तथा पारिवारिक दृष्टि से उपयोगी अंक की जितनी प्रशंसा की जाए, कम है। आपका साफ-सुथरा प्रकाशन, विचारोत्तेजक संपादकीय, जीवनोपयोगी रचनाएं प्राय: हर अंक संग्रहणीय, नवीन एवं ताजे विचारों से ओतप्रोत होता है। आपका संपादन कर्म अत्यंत श्रमसाध्य और पुनीत है।

–शिवशरण दुबे
दमदहा पुल के पास, कटनी मार्ग
बरही-483770 (म.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार का फरवरी-2012 अंक प्राप्त हुआ। आपकी सधी हुई संपादकीय एवं अध्यात्म से सरावोर लगभग सभी आलेख पत्रिका को सभी पत्रिकाओं से अलमाते हैं। लम्बे अर्से बाद इतनी साफ सुथरी पत्रिका देखकर अभिभूत हूं। कविताएं मन को छूने वाली हैं। यद्यपि मेरी रूचियों की सारी सामग्री एक स्थान पर पाना मेरे लिए किसी आश्चर्य से कम नहीं लगा फिर भी कुछ आलेख मन को छू गए। आचार्य विद्यासागरजी की 'वर्तमान में जीनेवाला सुखी' विशेष ध्यान खींचता है वहीं दूसरी ओर इंदु जैन का आलेख मॉर्डनाइजिंग जैनिज्म सराहनीय है। चिंतन में सुरेश पंडित का आलेख 'पाखंडों के विरोध में' पत्रिका में चार चांद लगाता है। कविता कानन में, आशीष दशोत्तर की ग़ज़ल, डॉ. मिथिलेश दीक्षित की क्षणिकाएं पठनीय हैं। समृद्ध सुखी परिवार हर घर में अपना स्थान बनाने की क्षमता रखती है। नई पुस्तकों की जानकारी एवं समीक्षाएं भी रोचक लगी।

–मनोज जैन 'मधुर'
सी.एस. 13, इंदिरा कॉलोनी
बाग उमराव दूल्हा, भोपाल-462010

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका का नववर्ष जनवरी-2012 का आकर्षक व चमचमाता अंक प्राप्त हुआ। महीने के प्रारंभ होते ही प्रतिदिन पत्र-पत्रिकओं के आने का क्रम शुरू हो जाता है किन्तु 'समृद्ध सुखी परिवार' के अंक की चमक कुछ अलग ही होती है और इसका इंतजार भी बेसब्री से रहता है। पत्रिका में आपके संपादन में दिन-प्रतिदिन निखार आ रहा है। धार्मिक जगत के पूज्यवरों, मुनिवरों, साधु-साध्वियों के आलेख पढ़ने को मिलते हैं। विविध विषयों की सामग्री के साथ आपका संपादकीय समसामयिक विषय पर विशेष प्रभावित करता है। रचनाओं के साथ मेल खाते चित्र रचना का आकर्षण बढ़ाने में सहयोगी बनते हैं अस्तु। नव वर्ष में मंगलकामना करते हैं कि दिन-प्रतिदिन बढ़ते आकर्षण के साथ ग्राहकों एवं पाठकों की संख्या में इजाफा होता रहे ताकि इसका उपयोग होने से आपका श्रम सफल हो। धन्यवाद।

–डॉ. हीरालाल छाजेड़ 'जैन'
जयश्री टी कंपनी, चौधरी बाजार,
नंदीशाही, कटक (उड़ीसा)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका के दिसम्बर-2011 अंक के संपादकीय में रोशनी के साथ चलने का आमंत्रण है। इस मान्यता के साथ कि सूरज के प्रकाश को कौन अपने घर में कैद कर पाया है। एक बड़ी सीख भी दी है कि जिस दिन रोना बंद कर देंगे, उसी दिन से जीना शुरु हो जायेगा। व्यापक भ्रष्टाचार की गंदगी, कार्यालयों की सुस्ती, मिलावट, नकली दवा, नकली डॉक्टर, नकली भिखारी, और नकली इलाज के बीच नकली हंसना-रोना इन सबके पीछे है मनुष्य की दूषित मनोवृत्ति। इसके बावजूद आशा की ओर बढ़ना है तो पहले निराशा को रोकना होगा, इसे गहराई से सोचना होगा। भ्रष्टाचार हावी है, झोपड़ी और फुटपाथ के आदमी से लेकर सुपरपावर के नेतृत्व तक आज भ्रष्ट है। शीर्ष नेतृत्व एवं प्रशासन में पारदर्शिता नहीं, सबने राजनीति व कूटनीति के मुखौटे लगा रखे हैं। इस मार्मिक चित्रण के साथ ही जगाने की पुरजोर कोशिश भी की है, खोये पर आंसू न बहाकर विकास के नये रास्ते खोलने का आह्वान किया है रोशनी के साथ चलने के लिए, अंधेरे को नकारते व धकेलते हुए और रोशनी होगी तो अंधेरा स्वयं ही भाग जायेगा।

–रूपनारायण काबरा
फ्लैट नं. 504, 1-बी, फेज-2
ठाकुर पब्लिक स्कूल के सामने
ठाकुर विलेज, कांदिवली (ई), मुम्बई

समृद्ध सुखी परिवार का अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका का अंतरंग-बहिरंग सुंदर है ही, साथ ही इसमें धर्म, अध्यात्म, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान आदि जीवन को सुखी और समृद्ध करने वाले अनेक विषयों पर जो सहज-सरल भाषा में जानकारी दी गयी है, वह पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी है।

-गोपालदास नीरज
जनकपुरी, अलीगढ़

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका नियमित मिल रही है। प्रत्येक अंक आकर्षक एवं पठनीय होता है। आपका संपादन बधाई के काबिल है।

–राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'
नई चर्चे के पीछे, शिव नगर कालोनी
टीकमगढ़-472001 (मध्यप्रदेश)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका के सभी विषय बहुत ही रोचक हैं। 'घर को पवित्र मंदिर बनाएं', 'परिजात वृक्ष मिटाता है थकान', 'प्रेम का वातावरण बनाएं परिवार में' आदि आलेख पठनीय हैं। शंख तथा गोमाता की महिमा, राजस्थान की लोक देवियों के बारे में भी पूरी जानकारी प्राप्त होती है। आलेखों के बारे में भी पूरी जानकारी प्राप्त होती है। आलेखों के चित्र बहुत आकर्षक हैं।

–के. सुलोचना
अनुग्रह अपार्टमेंट, बी-ब्लॉक, द्वितीय तल
22 जकारिया कॉलोनी मैन रोड, चोलाईमेदु
चैन्नई-600094 (तमिलनाडु)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का जनवरी-2012 अंक प्राप्त हुआ। मनोहारी आवरण देखकर एकाएक लगा कि कोई विज्ञापन का बुकलेट डाक से आ गया है किन्तु सामग्री देखकर लगा कि एक परिवार की समृद्धि में विविध आयामों के योगदान होते हैं। सामग्रियों का संकलन भी ठीक उसी तरह हुआ है- योग, अध्यात्म, साहित्य, चिंतन, विचार, मीमांसा, ज्ञान-विज्ञान, धर्म-कर्म, आदि-आदि। अवर्गीकृत विषय-सूची से पाठक थोड़ा भ्रमित होता है। शायद जिज्ञासा के लिए ऐसा प्रयोग किया गया हो। किन्तु कहीं-कहीं इससे उपेक्षा का खतरा भी हो सकता है। मेरे विचार से वर्गीकरण अपेक्षित है।

–प्रो. अनिरुद्ध प्रभास
अंग चेतना मंच, छोटा पंचगढ़
साहिबगंज-816109 (झारखण्ड)

संपादकीय

खुशहाली में भी हम सर्वोच्च हैं

सभी देशवासियों के लिये एक सुखद संवाद है कि भारत दुनिया के पांच शीर्ष खुशहाल देशों में से एक है। इन पांच देशों में इंडोनेशिया हमसे आगे जरूर है लेकिन अमरीका, आस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे विकसित देश हमसे पीछे हैं। अंतर्राष्ट्रीय संस्था इप्सोस ग्लोबल द्वारा कराए गए सर्वेक्षण से यह तथ्य सामने आया है। भारत के लोग काफी खुशहाल और संतुष्ट क्यों हैं? आज जबकि भारत में अंधकार और परेशानियों का साम्राज्य अपनी पूरी विकरालता के साथ जनजीवन में व्याप्त है। उसके दमन का दुश्चक्र और शोषण की चक्की-आदमी और आदमी के बीच कुछ भी साबुत नहीं छोड़ती। सबसे ज्यादा खंडित आदमी का विश्वास होता है। इस विश्वास के आहत होने का मतलब है मनुष्य की विडम्बनापूर्ण और यातनापूर्ण स्थिति। दु:ख-दर्द भोगती और अभावों-चिन्ताओं में रीतती उसकी हताश-निराश जिन्दगी। आज किसी भी स्तर पर उसे कुछ नहीं मिल रहा। उसकी उत्कट आस्था और अदम्य विश्वास को सामाजिक तनावों, आर्थिक दबावों, राजनैतिक दोगलेपन और व्यावसायिक स्वार्थपरता ने लील लिया है। लोकतन्त्र भीड़तन्त्र में बदल गया है। दिशाहीनता और मूल्यहीनता बढ़ रही है, प्रशासन चरमरा रहा है। भ्रष्टाचार के जबड़े खुले हैं, साम्प्रदायिकता की जीभ लपलपा रही है और दलाली करती हुई कुर्सियां भ्रष्ट व्यवस्था की आरतियां गा रही हैं। उजाले की एक किरण के लिए आदमी की आंख तरस रही है और हर तरफ से केवल आश्वासन बरस रहे हैं। सच्चाई, ईमानदारी, भरोसा और भाईचारा जैसे शब्द शब्दकोषों में जाकर दुबक गये हैं। व्यावहारिक जीवन में उनका कोई अस्तित्व नहीं रह गया है।

फिर भला भारत दुनिया के शीर्ष पांच खुशहाल देशों में कैसे? इस सवाल का उत्तर ढूंढने के लिए कुछ ने अपने भीतर झांक कर देखा हो, कुछ ने व्यापक परिस्थितियों को व्यापक दृष्टि से देखा हो। कुछ द्वंद्व में हो सकते है तो कुछ उत्तर के निकट पहुंच गये हो। मैं नहीं जानता आपके भीतर क्या चल रहा है, लेकिन मैं यह जानता हूं कि भारतीयों में कुछ तो है कि वे कुछ भी अजूबा कर सकते है। आखिर हम किस तरह गरीबी, महंगाई, लगातार घोटालों और जीवन की विडम्बनाओं के बावजूद खुश और संतुष्ट रहते हैं? क्षणभर के लिए तो मैं हतप्रभ था। फिर मेरे सामने भगवान राम, कृष्ण, महावीर, गांधी, गुरु वल्लभ, आचार्य तुलसी के आदर्श चेहरे थे, मेरे निराश चिन्तन में थोड़ी चमक दिखाई दी। लगा कहीं किसी कोने में आज भी कोई मूल्य स्थापित कर रहा है। आदर्शों को हमने दीवाल पर ही नहीं, अपने सीने में भी टांक रखे हैं। हमारी नई पीढ़ी के युवकों को यह सोचना चाहिए कि हमारे में भी ऐसी बात है, जिसे कोई 'रिश्वत' छू नहीं सकती, जिसको कोई 'सिफारिश' प्रभावित नहीं कर सकती और जिसकी कोई कीमत नहीं लगा सकता। ईमानदारी अभिनय करके नहीं बताई जा सकती, उसे जीना पड़ता है कथनी और करनी की समानता के स्तर तक और इसी से वास्तविक खुशहाली आती है।

मैं गर्व से सीना तानकर कह सकता हूं कि भारत का मस्तक ऊंचा करने वाले लोगों की आज भी देश में कमी नहीं है। न केवल देश का बल्कि सम्पूर्ण मानवता का मस्तक ऊंचा करने की सामर्थ्य हममें हैं और आज दुनियाभर के लोग इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि भारतीय जीवन पद्धति ही पूरी दुनिया को बचा सकती है। यही एकमात्र संस्कृति है जो 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' की प्रार्थना करती है और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से संपूर्ण दुनिया को अपना परिवार मानती है। हम केवल प्रार्थना ही नहीं करते उसे व्यावहारिक रूप से प्रकट भी करते हैं।

यहां रामायण है जो श्रीराम की मर्यादाओं की कथा है। गीता है जो कर्म का मार्ग दिखलाती है, श्री गुरुग्रंथ साहिब हैं, कुरान है, बाइबल है जो धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं। भारतीयों को ऋषियों, मुनियों, गुरुओं और समाज सुधारकों ने यही संस्कार दिए हैं कि संतोष ही परम सुख है। इसके विपरीत लोग भी हैं जो एक हजार की आकांक्षा लेकर कर्म क्षेत्र में उतरते हैं। जैसे ही उनकी ये पूर्ति होती है उनमें दस हजार, फिर लाख की इच्छा पैदा होती है। इस तरह वे लखपति फिर करोड़पति भी बन जाते हैं किन्तु उनकी लालसा चिरयुवा बनी रहती है।

यह अनुभव एक व्यक्ति का नहीं, सबका है। जो धन-संचय की लालसा से मुक्त हो जाते हैं, उन्हें अपवाद मानना चाहिए। कबीर ने चेतावनी दी थी-'नाव में पानी भर जाता है तो नाव डूब जाती है। घर में धन-संपत्ति बढ़ती है तो उसके संचय में विपत्ति भी आती है।' प्राय: देखने में आता है कि धन के पीछे बाप-बेटे, भाई-भाई पराये बन जाते हैं और कहीं-कहीं तो व्याधि इतनी बढ़ जाती है कि वे एक-दूसरे की जान ले लेते हैं। यही देखकर कबीर ने घर में बढ़े धन को निकाल देने की सलाह दी थी। मानव की इसी दुर्बलता को देखकर भगवान महावीर ने 'परिग्रह-परिमाण' की बात कही थी। उन्होंने धन को हेय नहीं बताया था, अपनी नितान्त आवश्यकता की सीमा बंधवाई थी। यह सीमा संतोष की ही पर्याय थी। गांधीजी ने भी इसी बात को दूसरे शब्दों में स्पष्ट करते हुए कहा था कि अपनी अनिवार्य आवश्यकताएं पूरी करने के बाद जो बचे, उसका अपने को 'न्यासी' (ट्रस्टी) मानो और उसका उपयोग समाज के कल्याण के लिए करो। यही सब करते हुए ही हम तमाम विपरीत स्थितियों के बावजूद खुशी से जीना जानते हैं। हमें बताया गया है कि सांसारिक वस्तुएं अस्थायी और क्षणिक हैं। बाहरी वस्तुओं में जितना सुख अनुभव किया जाए, वह उतना ही आत्मा को दुख देने वाला होता है। बाहरी सुखों में खुद को लीन कर लेना अज्ञानता है, अंधकारमय है।

लोगों ने अपने लिए सुख-सुविधाएं जुटाने के लिए अपना-अपना मार्ग तलाश लिया है। वह सही हो या गलत? उसे क्या लेना-देना सरकार की आर्थिक विकास दर से, उसे क्या लेना-देना सरकारी आंकड़ों से। लोग अपनी मुश्किलों का हल ढूंढ लेते हैं। उनके पास जो कुछ है काफी है, यही भावना उन्हें संतुष्ट करती है और खुशहाल भी। इसमें अध्यात्म भी एक बड़ा सहारा है। वैसे तो आध्यात्मिक विकास का एक लाभ हमारे शरीर और मन को भी होता है। यानी इससे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य बेहतर हो जाता है। पर इससे भी बड़ी बात यह है कि आध्यात्मिक विकास नई खुशियों और नई व सार्थक अनुभूतियों का द्वार मनुष्य के लिए खोलता है। जब हम दूसरों का दुख-दर्द दूर करते हैं तो इससे गहरा संतोष और प्रसन्नता मिलती है। इस तरह जो खुशी जीवन में आती है, वह भोग-विलास से होने वाले क्षणिक आनंद से बहुत अलग तरह की खुशी है और यही शाश्वत है, त्रैकालिक है और सार्वकालिक है। यही हमें लिये चलती है या हम इसी के सहारे चलते हैं।

वल्लभ उवाच

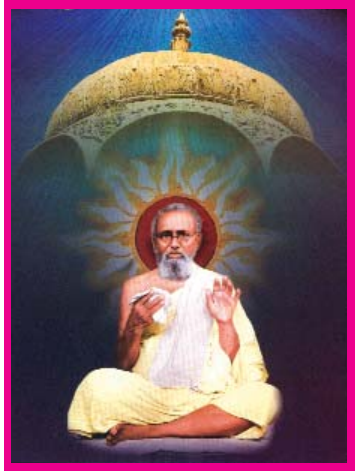

धर्म, पाप और पुण्य

धर्म!

''हर जीव का अपना धर्म है!

शेर का जीवन, अपना जीवन है, गधा केवल परिश्रम देना जानता है, गाय दूध देकर पोषण करती है, वृक्ष अपना फल स्वयं नहीं खाते।

नदियां अपना पानी स्वयं नहीं पीतीं। फूल अपनी सुगन्ध स्वयं नहीं लेते।

''परोपकाराय सतां विभूतय:''

जब प्रकृति का हर जीव, जड़ चेतन सभी का धर्म, केवल परोपकार ही है-तो फिर...

क्या कारण है कि एक मानव ही, स्वार्थ और अपनी निरीहता के कारण, पूर्णरूप से हर वस्तु के लिये दूसरों का मोहताज है?

जो स्वयं मोहताज है, भिखारी है, वह सर्वेसर्वा हो ही कैसे सकता है?

इस 'अहम् भावना' को, इस मानव की असमर्थता को, सच्चा ज्ञान और वास्तविक बुद्धि के मार्गदर्शन के लिये ही-

धर्म को जीवन प्रधान बनाया गया है। परंतु वाह रे, मानव! कीट पतंग, पशु, पक्षी, वनस्पति, फूल-फल, अपना धर्म निभा सकते हैं।

परंतु तू! इन सबका आश्रित होकर भी अपना धर्म नहीं निभा सकता। क्यों?

पाप!

''जो कुकृत्य है, वह पाप है! अपने स्वार्थ के लिये, अपने सुख के लिये, दूसरों को हेय समझ कर, अपना स्वार्थ सि) करना, पाप कहलाता है।

बछड़े के मुंह का दूध छीन कर अपना पेट भरना पाप नहीं तो क्या?

शहद की मिठास का रसास्वादन करने के लिये, मधुमक्खियों का परिश्रम निचोड़ना, पाप नहीं तो क्या?

प्रकृति, मानव की हर आवश्यकता की पूर्ति स्वयं करती है। गन्ने के खेत!, गन्ने का रस, नदियों का पानी, फलों से लदे ये वृक्ष, कपास के फूल- ये सब क्या हैं?

प्रकृति की उपकार भावना!

फिर यह लालसा, यह लिप्सा, नवीनता की कामना और शारीरिक वासना के लिये सांसारिक प्रपंच क्यों?

नश्वर शरीर के लिये, ये आडम्बर क्यों? धन की लालसा में प्रकृति का व्यापार क्यों?

केवल-''लेना'' ही, मानव की भूख क्यों? ''देने'' की भावना का ह्रास मानव को, आज पतन की ओर गिरा रही है।

पुण्य!

''अपना धर्म पालन ही पुण्य कहलाता है।

पूजा-पाठ, धयान, कर्म, प्रभुसेवा, ईश्वरभक्ति, दान, दया कर्मों द्वारा पुण्य का प्रपंच रचने वालों को ध्यान रखना चाहिये, ये पुण्य कर्म साधन मात्र हैं, वास्तविक पुण्याअर्जन नहीं. ..

प्राणीमात्र को अपने जैसा समझ कर प्राणीमात्र पर दया, उनकी आवश्यकताओं का अध्ययन कर, जीव सेवा करना ही वास्तविक पुण्य है।

एक श्रीमंत के घर नौकर चाकरों का उसके आश्रित रह कर सेवा करना और श्रीमंत का उनसे सेवा करवाना, अपने स्वार्थों के पालन हेतु वे अपने सुख के लिये दूसरों को पराधीन रखना पाप है, पुण्य नहीं।

वे आपकी सेवा करते हैं, आप उन्हें तनख्वाह देते हैं, उपकार नहीं करते।

भूखों को भोजन देते समय यदि यह विचार आ गया कि आप धर्म कर रहे हैं, या पुण्य कमा रहे हैं तो- वह पुण्य नहीं, आडम्बर कहलाएगा।

किसी भी कृत्य के पीछे भावना की परछाई,उस कृत्य को पुण्य या पाप में बदल देती है।

जीवमात्र का कल्याण पुण्य है। ■

स्वामी विवेकानंद का जीवन दर्शन

वह ऊंचे बंगाल घराने में पैदा हुए लेकिन योगियों का जीवन जिया। हिन्दुत्व और वेदांत का प्रचार पश्चिमी देशों में करने वाले आधुनिक चिंतक के रूप में मशहूर हुए। परोपकारी काम करने वाली संस्था रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। हर तबके पर असर। कई किताबें लिखीं, जिनमें अध्यात्म और आत्म-विकास पर खासा जोर दिया।

● यही दुनिया है। अगर तुम किसी का भला करो, तो लोग उसे कोई अहमियत नहीं देंगे, लेकिन ज्यों ही तुम उस काम को बंद कर दो, वे फौरन तुम्हें बदमाश साबित करने में जुट जायेंगे।

● हर काम को तीन अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है- उपहास, विरोध और स्वीकृति।

● ऐसी बेकार बातों और उनकी चर्चा से दूर रहो, जिनकी कोई उपयोगिता ही नहीं है।

● कोई शख्स कितना ही महान क्यों न हो, आंखें मूंदकर उसके पीछे न चलो। अगर भगवान की ऐसी ही मंशा होती तो वह प्राणी को आंख, नाक, कान, मुंह, दिमाग आदि क्यों देता?

● पक्षपात ही सब अनर्थों का मूल है, यह न भूलना। यदि तुम किसी के प्रति दूसरे की तुलना में ज्यादा प्रेम प्रदर्शित करोगे तो उससे कलह ही बढ़ेगा।

● गंभीरता के साथ बच्चों जैसी सरलता को मिलाओ। सबके साथ मेल से रहो। अहंकार के सब भाव छोड़ दो और साम्प्रदायिक विचारों को मन में न लाओ। बेकार के विवादों से बचो। याद रखो, जब तक तुम्हारे हृदय में उत्साह और गुरु और भगवान में विश्वास है, तब तक तुम्हें कोई नहीं दबा सकता।

● पवित्रता, धैर्य और कोशिश के द्वारा सारी बाधाएं दूर हो जाती हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि सभी महान कामों के पूरा होने में वक्त तो लगता है।

● जब तक जीना, तब तक सीखना। अनुभव ही सबसे बड़ा शिक्षक है।

● उठो, जागो और तब तक रुको नहीं, जब तक मंजिल प्राप्त न हो जाए।

दिशाबोध

सुखी परिवार की दिशाएं

गणि राजेन्द्र विजय

परिवार सामाजिक संगठन की एक मूलभूत सर्व-व्यापक इकाई है। प्रत्येक समाज में इसका रूप भिन्न प्रकार का है। पितृ सत्तात्मक समाज में पुरुष वर्ग के प्राधान्य के कारण तथा सहस्त्राब्दियों से नारियों का शोषण होने से सुखी पारिवारिक जीवन की एक आदर्श कल्पना तो की जा सकती है पर सुखी परिवार यथार्थत: कम ही मिल सकते हैं। वर्तमान भौतिकवादी युग में संपूर्ण मानव समाज पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति का अनुकरण करते हुए येन-केन-प्रकारेण अर्थ प्राप्ति में संलग्न है। प्राचीन ग्राम संस्कृति अब लुप्तप्राय: है। शहरी जीवन और आधुनिक संस्कृति ने पिता-पुत्र, माता, पत्नी, बहन, दादा, चाचा आदि संबंधों को एक औपचारिक सीमा में आबद्ध कर रखा है जिनसे पारिवारिक जीवन अत्यंत आडम्बरपूर्ण हो गया है। सभी अर्थ-संग्रह में इतने व्यस्त हैं कि बाप को बेटे से, मां को अपने बच्चों से अथवा अन्य लोगों से मिलने की फुरसत ही नहीं। नारी स्वातंत्र्य के नाम पर शहरों में विकसित होती हुई क्लब संस्कृति, बार बालाओं के मादक नृत्य एवं देहदर्शन में सुख प्राप्ति की कामना से प्रवंचित समाज से क्या कभी सुखी परिवार की कल्पना की जा सकती है।

ग्रामीण तथा शहरी परिवारों में रही-सही कसर दहेज-प्रथा पूरी कर रही है। समाचार पत्रों में बहुत-से समाचार दहेज के कारण होने वाली नारी हत्याओं से संबंधित रहते हैं। हालांकि इनमें से कुछ में दोषी स्त्रियां भी होती हैं। आधुनिक मीडिया भी ऐसी घटनाओं के लिए कम उत्तरदायी नहीं है। समाज में आर्थिक प्रतिस्पर्धा के कारण स्वयं को पड़ोसी से अधिक हैसियत वाला प्रदर्शित करने की भावना ने सामाजिक और पारिवारिक वातावरण को विषाक्त बना डाला है।

आज पारिवारिक मूल्यों का निरंतर ह्रास हो रहा है। संयुक्त परिवार विघटित हो रहे हैं। पति, पत्नी और बच्चों के अतिरिक्त अन्य कोई भी सदस्य अवांछित है। परिवार में पत्नी और पति यदि दोनों अलग-अलग कार्यरत हैं, दोनों में यदि परस्पर सामंजस्य का अभाव है तो ऐसा परिवार भी टूट जाता है। बच्चे कभी मां तो कभी पिता के बीच अव्यवस्थित रहते हैं। ऐसी दशा में कोई परिवार सुखी कैसे रह सकता है? सुखी परिवार तो वह है जिसमें पति-पत्नी में प्रणय की उमंग के साथ ही परस्पर सामंजस्य भी हो। परस्पर अहं भाव का संघर्ष न हो, आर्थिक रूप से संपन्न हो। रोटी, कपड़ा, मकान की चिंता न हो, बच्चे आज्ञाकारी हों, वृद्धों का सम्मान हो तथा सामाजिक दृष्टि से भी वे अपने को सम्मानित अनुभव करते हो।

किन्तु आज पारिवारिक परिस्थितियां और मान्यताएं इतनी तीव्रता से परिवर्तित हो रही है कि पारिवारिक सुख स्वप्न बनता जा रहा है। सामाजिक संबंधों की टूटन के कारण आज हर आदमी सामाजिक सुरक्षा की गारंटी के रूप में धन को ही सर्वाधिक आवश्यक मानता है। बदले सामाजिक संबंधों के कारण संकटापन्न स्थिति में अपने सगे भी मदद करने से कतराते हैं। जो सामाजिक संबंध कभी सुरक्षा बीमा होते थे अब उनकी जड़े सूख रही हैं। विशेषकर नगरों में यह संबंध समाप्त प्राय: है।

प्रत्येक व्यक्ति आज सारी नैतिकता को ताक पर रखकर काला धन एकत्र कर उसे यथाशक्ति सफेद करने में व्यस्त है। फलत: सीमित परिवारों में भी परस्पर सौहार्द, सहयोग एवं प्रेम तथा सामंजस्य का अभाव होता जा रहा है। विवाह यद्यपि एक धार्मिक और वैधानिक बंधन है किन्तु वास्तव में इसे वैयक्तिक बंधन ही कहा जा सकता है जिसमें पति-पत्नी की इच्छाओं, मनोवृत्तियों तथा विकारों की एकरूपता आवश्यक है। पति-पत्नी के अंत: वैयक्तिक संबंधों में सामंजस्य सुखी परिवार की पहली शर्त है।

पति-पत्नी की भावात्मक मनोवृत्तियों, आदर्शों, महत्वाकांक्षाओं, लक्ष्यों, आर्थिक स्थितियों, आय के साधनों तथा सामाजिक संपर्कों में परस्पर विश्वास भाव में थोड़ा-सा टकराव भी पारिवारिक सुख-शांति को समूल नष्ट कर देता है।

पति-पत्नी की अत्यधिक व्यस्तता के कारण उनमें तथा बच्चों में कम्यूनिकेशन गैप अर्थात् परस्पर विचार-विनिमय का अभाव हो जाता है। वे एक दूसरे के प्रति मनोवैज्ञानिक रूप से पृथक होते जाते हैं। परस्पर प्रेम तथा समस्याओं पर विचार विनिमय का उन्हें अवसर ही नहीं मिलता है। जेनरेशन गैप अर्थात पीढ़ी का अंतर भी माता-पिता तथा बच्चों के विचारों, मूल्यों तथा आदर्शों में मतैक्य नहीं रहने देता। कभी-कभी माता-पिता के पुरातन मूल्यों तथा बच्चों के नवीन मूल्यों के बीच संघर्ष की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। नारियों की बदलती परिस्थिति तथा उनकी सामाजिक एवं राजनीतिक भूमिकाओं में भागीदारी भी तनाव एवं संघर्ष की स्थिति उत्पन्न करता है। इसीलिए उच्च तथा मध्य वर्ग में तलाक तथा विवाह-विच्छेद की घटनाएं निरंतर बढ़ती जा रही हैं। विवाह का रोमांसवादी स्वरूप अथवा प्रेम विवाहों की भोगप्रधान अवधारणा एवं उनके बढ़ते प्रचलन के कारण ही विवाह विच्छेद की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। पारस्परिक सहयोग, त्याग, विश्वास, मैत्री की भावना तथा हार्दिक प्रेम-भावना अब समाप्त हो रही है। विषयभोग एवं रोमांस के पश्चात युवा वर्ग जीवन की कठोर यथार्थता का सामना करने लगता है तब घबराकर या तो आत्महत्या कर लेता है अथवा विवाह-विच्छेद कर लेता है।

आज विभिन्न क्षेत्रों में निरंतर होते हुए परिवर्तनों के कारण भारतीय परिवार संरचनात्मक तथा प्रयोगात्मक दोनों दृष्टियों से परिवर्तित हो रहे हैं। शिक्षा के अवसरों की प्राप्ति, नौकरियों के अधिकाधिक अवसरों की उपस्थिति तथा सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन पारिवारिक संरचना को निरंतर प्रभावित कर रहे हैं। परिवारों में ढांचागत परिवर्तन भी हो रहे हैं। उनके आंतरिक तथा बाह्य स्वरूपों में भी परिवर्तन हो रहे हैं। औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं व्यक्ति-प्रधान विचारधाराओं की वृद्धि के कारण अब परिवार का परम्परागत स्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में भी बदल रहा है। भूमि पर जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण सबके लिए कृषि रोजगार का माध्यम नहीं बन सकती। संचार और यातायात के साधनों एवं औद्योगिक तथा व्यापारिक क्षेत्रों में निरन्तर होने वाली प्रगति, सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन तथा आर्थिक प्रतिस्पर्धा ने व्यक्ति को अधिक संकुचित एवं स्वार्थी बना दिया है।

सामाजिक संरचना का सबसे छोटा घटक है परिवार। व्यक्ति के सबसे निकट होने के कारण यह संस्कार-निर्माण, अहिंसात्मक समाज रचना में विशेष भूमिका निभाता है। वास्तव में यह व्यक्ति सुधार की प्रारंभिक पाठशाला है। आज के युग में बदलते विश्वासों, रिश्तों, सांस्कृतिक मूल्यों और चिंतन में नये आयाम जुड़ रहे हैं। भौतिकवाद के बढ़ते प्रभाव और पाश्चात्य संस्कृति तथा

पारिवारिक सफलता के तीन गुण हैं सहनशीलता, स्नेहशीलता एवं श्रमशीलता। नम्रता, मिलनसारिता, मैत्री आदि वे गुण हैं जो पारिवारिक सदस्यों को एक-दूसरे से जोड़े रखते हैं।

पूंजीवादी दृष्टिकोण ने हमारी आस्थाओं को कमजोर किया है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के बढ़ते संचार साधनों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की नई खोजों, शहरीकरण आदि ने हमारी जीवनशैली और सोच में परिवर्तन किया है। संक्रमण काल में बदलते मूल्यों ने हमारी पहचान को चुनौती दी है। जीवनशैली तनावपूर्ण, स्वार्थी एवं एकाकी बन रही है। आस्थाविहीन समाज की ओर बढ़ते मनुष्य कब तक परिवारों के बिखराव को रोक पायेंगे? संयुक्त समन्वित परिवार की जगह एकल और बिखरते परिवार बढ़ रहे हैं। संयम, करुणा, प्रामाणिकता, सहिष्णुता, मैत्री-भाव, स्नेह-भाव, आत्मानुशासन आदि जो सूत्र शांतिमय, प्रेममय और सुखी बनाते थे वे सूत्र आज के पारिवारिक जीवन से लुप्त होते जा रहे हैं। इन सब प्रश्नों का ही उत्तर है- आदर्श परिवार।

परिवार में छोटे-बड़े व्यक्ति मिलकर दिनचर्या को सरल व समग्र बनाते हैं। उसके अभाव में सराय में रात बिताने वाले एवं मजदूरी कर पेट पालने वाले व्यक्ति जैसी स्थिति होगी। समग्र जीवन परिवार के सहारे ही बन पड़ता है। यह ठीक है कि परिवार के लालन-पालन में श्रम और समय लगता है किन्तु साथ ही यह भी निश्चित है कि समुदाय के सहारे व्यक्ति प्रसन्नचित्त और उपयुक्त विशेषताओं वाला बनता है। परिवार के बीच रहकर ही पूर्णता आती है।

परिवार में सबसे निकट एवं सहयोगी पत्नी होती है, उसके सहारे न केवल परिवार का सुसंचालन होता है वरन् व्यक्ति अपनी कितनी ही अपूर्णताओं को पूर्ण करता है। व्यक्तित्व विकास में पति-पत्नी मिलकर एक दूसरे को पूर्णता देते हैं। योग्यताओं एवं क्षमताओं को बढ़ाने में एक-दूसरे के सहायक होते हैं। आजीविका उपार्जन पति ही करता है किन्तु सही ढंग से खर्च करने का काम पत्नी की सहायता के बिना नहीं बन पड़ता। जिस व्यक्ति का दाम्पत्य जीवन सरस और समग्र है, उसे यह समझना चाहिए कि उसका जीवन सफल हो गया। इसके विपरीत दोनों के मध्य रूखापन, कलह और अविश्वास है तो समझना चाहिए कि पारिवारिक जीवन अधूरा ही है।

परिवार में कई व्यक्ति होते हैं पर उस गाड़ी के दो पहियों की भूमिका को पति-पत्नी मिलकर ही निर्वाहित करते हैं। पहिये टूटे हो तो गाड़ी का ढांचा कीमती होते हुए भी उसमें गतिशीलता नहीं हो सकती। परिवार के सभी सदस्यों के प्रति आत्मीयता के भाव रहने चाहिए। सहयोग के भाव रहने चाहिए। सहयोग प्रेम के बिना संभव नहीं है। जिस सहयोग से पूरे परिवार को उत्साह और पोषण मिलता है, उसका नाम ही प्रेम है। प्रेम आत्मिक गुण है, वह अंतरंग की उत्कृष्टता से ही विकसित होता है।

पारिवारिक सफलता के तीन गुण हैं सहनशीलता, स्नेहशीलता एवं श्रमशीलता। नम्रता, मिलनसारिता, मैत्री आदि वे गुण हैं जो पारिवारिक सदस्यों को एक दूसरे से जोड़े रखते हैं। संदेह की स्थिति परिवार के सदस्यों को सुख और शांति से जीने नहीं देती। यदि परिवार का वातावरण मुक्त हो और परिवार के सदस्यों में मुक्त-भाव से अपनी समस्या रखने का साहस हो तो अनेक कुंठाओं द्वारा पैदा होने वाली बीमारियों से सहज ही बचा जा सकता है।

परिवार समूह चेतना का प्रतीक है, उसमें दो-चार व्यक्तियों की विवेक-चेतना का जागरण पूरे परिवार में जागृति नहीं भर सकता। वही परिवार आगे बढ़ सकता है जो व्यसनमुक्त और आडम्बरमुक्त हो। परिवार वही अच्छा होता है जो सात्विक हो, सुसंस्कारित हो और चरित्र संपन्न हो।

सुखी परिवार की कल्पना को साकार करने हेतु आवश्यक है कि हमारी जीवनशैली भी आदर्श हो। हमारी जीवनशैली संयम प्रधान, विनम्रता प्रधान और करुणा प्रधान हो। व्यवहार की शालीनता से, सबके प्रति संवेदनशीलता से, गुणों के प्रति अनुरागता से एवं आवेग तथा आवेश की अल्पता से जीवन मूल्यों को बढ़ाएं। आदर्श जीवनशैली के लिए हम समय-प्रबंधन का अभ्यास करें। आत्म संतुलन का अभ्यास करें। हमारा चिंतन सकारात्मक हो। हमारी सोच मंगलमय हो। अगर हमारी जीवनशैली में इस प्रकार के परिवर्तन होते हैं तो निःसंदेह यही बिन्दु आदर्श परिवार की, सुखी परिवार की एवं चैतन्यमय परिवार की धुरी होंगे और इन बिन्दुओं के सहारे ही हम आदर्श परिवार एवं सुखी परिवार की कल्पना को साकार कर सकेंगे। ■

विवेचन

विवेक शुक्ल

अंगुलियों में निहित मूल्यवान रहस्य

योग एक विज्ञान है और 'मुद्रा विज्ञान' उसका एक उपांग। भारतीय धर्म संस्कृति और अध्यात्म-विज्ञान प्रकृति के मूलभूत सिद्धांतों का उपासक रहा है। अध्यात्म विज्ञान की आधारभूत अवधारणा प्रकृति के सामंजस्य पर आधारित है। भारतीय दर्शन के अनुसार 'यत् पिंडे तत् ब्रह्माण्डे' यानी जो पिंड यानी शरीर में है, वही ब्रह्माण्ड में है। पिंड और ब्रह्माण्ड में जो है वह है-पृथ्वी, पानी, अग्नि, आकाश और वायु। यही आधारभूत पांच तत्व हैं। इन पांच तत्वों के पारस्परिक सामंजस्य में जब भी असंतुलन, विसंगति या विकृति आ जाती है, तब उससे प्रकृति और व्यक्ति के स्वास्थ्य में विकार उत्पन्न हो जाता है। इस विकार को दूर करने का उपाय यही है कि इनके बीच के सामंजस्य को सम की स्थिति में लाया जाए। सम की स्थिति लाने के लिए योगियों ने योग के साथ मुद्राओं का निर्धारण किया है।

पांच तत्वः पांच अंगुलिया

मुद्रा विज्ञान के अनुसार जो पांच आधारभूत तत्व हैं, वे व्यक्ति के हाथों की अंगुलियों में विद्यमान हैं। योगियों का मानना है कि हाथ के अंगूठे में अग्नि तत्व विद्यमान रहता है, यानी हाथ का अंगूठा अग्नि तत्व का प्रतीक है। इसी तरह हाथ की पहली अंगुली–तर्जनी वायु तत्व की, दूसरी अंगुली–मध्यमा आकाश तत्व की और तीसरी अंगुली–अनामिका पृथ्वी तथ्व की और सबसे छोटी अंगुली–कनिठिका जल तत्व की प्रतीक है। इस प्रकार स्नायुविक तंत्र की शक्तियों के केन्द्र हाथ की अंगुलियों के सिरों में स्थित होते हैं।

जिस प्रकार किसी स्थिति विशेष को या अंग विशेष की भंगिमा को मुद्रा कहा जाता है, उसी प्रकार हाथ की अंगुलियों का अन्य अंगुलियों से संस्पर्श को भी मुद्रा कहा जाता है। अंगुलियों द्वारा बनायी गयीं इन मुद्राओं से शरीर के विभिन्न आधारभूत तत्वों की स्थिति सम होती है और इन आधारभूत तत्वों का सम होना ही शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक स्वास्थ्य का आधार है।

यद्यपि, योगियों ने सतत आत्म-अनुसंधान से अनेक मुद्राओं का निर्धारण किया है इनमें ज्ञान मुद्राओं का निर्धारण किया है इनमें ज्ञानमुद्रा, प्राणमुद्रा, अपानमुद्रा, शंखमुद्रा और शून्यमुद्रा आदि कुछ ऐसी मुद्राएं हैं, जो साधक को शारीरिक-मानसिक रूप से सबल-स्वस्थ कर साधना के मार्ग पर प्रवृत्त करती हैं।

ज्ञानमुद्राः मानसिक स्वास्थ्य

ज्ञानमुद्रा पहली अंगुली यानी तर्जनी के हाथ

के अंगूठे के अग्रभाग से स्पर्श करने पर यह मुद्रा बनती है। इस मुद्रा का नाम ज्ञान मुद्रा इसलिए है कि इसके सतत अभ्यास से मन-मस्तिष्क व समस्त स्नायुमंडल को बल प्राप्त होता है। फलतः चित्त शांत होता है और चित्त की शांति ही ज्ञान, आत्मज्ञान व परमानंद की नींव है। अर्जुन को गीता का उपदेश देते समय श्रीकृष्ण इसी ज्ञानमुद्रा में अवस्थित थे, जैसा कि गीता में वर्णित है-

प्रपन्नपारिजाताय तोत्र वेत्रे कपाण्ये।
ज्ञान मुद्राय कृष्णाय गीतामृत दुहेनमः॥

ज्ञानमुद्रा का अभ्यास किसी भी स्थिति में अर्थात् चलते-फिरते, उठते-बैठते किया जा सकता है। इसे एक हाथ से भी कर सकते हैं। यदि इसे 'पद्मासन' में बैठकर दोनों हाथों से किया जाए तो अधिक लाभप्रद होता है। इसके सतत अभ्यास से विस्मरण, अनिद्रा, अन्यमनस्कता और मानसिक तनाव से छुटकारा पाया जा सकता है। यही नहीं अत्यधिक क्रोधियों, चिड़चिड़े सनकी लोगों के लिए यह वरदान के समान है।

वस्तुतः अनिद्रा कोई रोग नहीं है, बल्कि यह लक्षण है, उस मानसिक तनाव, भय, चिंता व व्याकुलता का, जो व्यक्ति के चित्त में विद्यमान है। चित्त की अस्थिरता स्नायुमंडल पर पड़नेवाले दबावों से ही उत्पन्न होती है। ज्ञान मुद्रा मस्तिष्क के ज्ञान तंतुओं को सीधे प्रभावित करती है। ज्ञान मुद्रा के निरंतर अभ्यास कसे मस्तिष्क के कोशों में वैद्युतीय तरंगों का संचार सुचारू रूप से होने लगता है, जिससे सभी मनोरोग दूर हो जाते हैं।

ज्ञानमुद्रा का आध्यात्मिक क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट महत्व है। तंत्र शास्त्र की उपासना पद्धतियों, बौद्ध व नाथ सम्प्रदाय की उपासना पद्धतियों, बौद्ध व नाथ सम्प्रदाय की उपासना पद्धतियों में ज्ञानमुद्रा को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। गायत्री मंत्र के पूर्व और उसके उपरांत भी अन्य मुद्राओं के साथ ज्ञानमुद्रा का विधान है।

पृथ्वीमुद्राः आंतरिक शक्ति

अनामिका अंगुली को अंगूठे के अग्रभाग से मिलाने पर बननेवाली मुद्रा को एक पृथ्वी मुद्रा कहा जाता है। यह मुद्रा पृथ्वी तत्व की प्रतीक है। इस मुद्रा के सतत अभ्यास से शरीर के आंतरिक अवयवों की शक्ति का संवर्द्धन होता है। शारीरिक दुर्बलता, आलस्य की प्रवृत्ति, उत्साहहीनता की स्थितियों में इस मुद्रा के अभयास से आश्चर्यजनक लाभ होताहै। शरीर में हलकापन प्रतीत होता है, नवस्फूर्ति मिलती है और शरीर कांतिमय होता है।

वायुमुद्राः वात विकार

तर्जनी अंगुली को अंगूठे की जड़ में लगाकर और फिर उस पर अंगूठे से ही हलका-सा दबाव देने से जो मुद्रा बनती है, उसे वायुमुद्रा कहा जाता है। इस मुद्रा के अभ्यास से बात (वायु) रोगों से उत्पन्न होनेवाले इक्यावन प्रकार के विकार दूर हो सकते हैं। पक्षाघात, गठिया, वायुशूल, लरजा आदि विकारों में वायुमुद्रा अत्यंत असरकारक है। इसके सतत अभ्यास से जो लरजा रोग, जिसमें व्यक्ति का सिर व हाथ-पैर व विभिन्न अंग हिलने लगते हैं, में राहत मिलती है। रोग शमन के बाद वायुमुद्रा का नियमित अभ्यास नहीं करना चाहिए। वायुमुद्रा का अभ्यास पेट व कान के दर्द के लिए नहीं किया जाना चाहिए।

शंखमुद्राः वाणी विकार

एक हाथ के अंगूठे को बाहर निकालकर और शेष अंगुलियों को मोड़ लेने व दूसरे हाथ के अंगूठे को कनिष्ठिका अंगुली की जड़ के पास दबाने तथा उसी हाथ की अंगुलियों को ऊपर उठाने पर शंखमुद्रा की स्थिति बनती है। शंखमुद्रा में एक हाथ का अंगूठा व दूसरे हाथ की तर्जनी के सिरों को आपस में स्पर्श करते रहना चाहिए। शंखमुद्रा के अभ्यास से गले के रोगों में काफी राहत मिलती है। हकलाना, तुतलाना वा वाणी विकारों में तो शंखमुद्रा आश्चर्यजनक राहत प्रदान करती है। यदि शंख और घंटे की ध्वनि के तालमेल के मध्य शंख मुद्रा का अभ्यास किया जाए तो आस-पास का वातावरण भी शुद्ध हो जाता है।

-72/63 महावीरन गली, कटघर,
मुट्ठीगंज, इलाहाबाद-211003 (उ.प्र.)

विवेचन

डॉ. के. के. अग्रवाल

प्रसन्न व्यक्ति का हृदय भी स्वस्थ रहता है

वेदों में भी व्यक्ति और प्रसन्नता की चर्चा है। तनाव को कुछ और नहीं, बल्कि इसे पहले से पता स्थिति के प्रति मस्तिष्क और शरीर की प्रतिक्रिया बताया गया है। तनाव से हम तब तक ठीक तरह निबट नहीं सकते जब तक कि हम तनाव की बनी–बनाई गई व्याख्या को बदल नहीं देते। ऐसा संभव है सकारात्मक विचारों से।

वेदों में कहा गया है- अपनी सोच का ध्यान रखें क्योंकि सोच ही शब्द का रूप लेती है। शब्दों का ध्यान रखें, क्योंकि शब्द ही आपका व्यवहार तय करते हैं। अपने व्यवहार पर गौर करें क्योंकि व्यवहार ही आदत में बदल जाता है। अपनी आदतों पर नजर रखें क्योंकि इससे आपका चरित्र बनता है। चरित्र का ध्यान रखें क्योंकि इससे भाग्य निर्धारित होता है। उपनिषदों में भी कहा गया है कि जैसी भावना होती है, व्यक्ति वैसा ही होता है। इस बात को आधुनिक विज्ञान भी मान रहा है। हाल ही में एक अमेरिकी विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित लेख में कहा गया कि खुश रहने वाले व्यक्ति का हृदय भी स्वस्थ रहता है।

अध्ययन में लगभग तीन हजार ब्रितानी वयस्कों को शामिल किया गया। शोधकर्ताओं के दल का नेतृत्व किया यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन के डॉ. एंड्रयू स्टेप्टो ने। शोध के दौरान जिन लोगों ने खुद को प्रसन्न बताया उनमें कोरटिसोल (तनाव पैदा करने वाला एक हार्मोन) की मात्रा कम पाई गई। यह बात महिलाओं के संबंध में भी लागू हुई। जिन महिलाओं ने खुद को प्रसन्न बताया था, उनके रक्त में नुकसान पहुंचाने वाले दो प्रकार के प्रोटीन-सीआरपी और इंटरल्यूकिन-6 का स्तर कम पाया गया। यह तो हम सभी भलीभांति जानते हैं कि प्रसन्न रहने वालों का स्वास्थ्य भी बढ़िया रहता है, उन लोगों की तुलना में जो तनाव में या लगातार प्रतिकूल परिस्थितियों में रहते हैं। प्रसन्न रहने वालों की जीवनशैली भी स्वास्थ्यवर्धक होती है। उनमें बुरी आदतें कम होती हैं। हालांकि नए अध्ययनों में पता चला है कि प्रसन्नता और दूसरी सकारात्मक भावनाओं का जुड़ाव शारीरिक प्रतिक्रिया से है। एक अध्ययन में 2,873 स्वस्थ पुरुषों और महिलाओं को शामिल किया गया। उनकी उम्र 50 से 74 के बीच थी। अध्ययन के दौरान उन्होंने अपनी-अपनी लार के छह-छह सैंपल जमा किए। इसका उद्देश्य कोरटिसोल के स्तर को जांचना था। सैंपल देने के बाद उन लोगों ने अपने मूड के बारे में भी बताया। यानी कि क्या वे प्रसन्न हैं? किसी प्रकार की उत्तेजना तो नहीं है? या फिर संतुष्ट हैं?

शोधकर्ताओं ने बाद में शोध में शामिल लोगों को सी-रिएक्टिव प्रोटीन और इंटरल्यूकिन-6 की जांच की। इसमें पाया कि पुरुष या महिला, जिन्होंने खुद को प्रसन्न बताया था उनमें कोरटिसोल का स्तर औसत रूप में कम पाया गया। निष्कर्ष निकालने से पहले शोधकर्ताओं ने उम्र, वजन, धूम्रपान और आय जैसे कारकों का भी ख्याल रखा। पॉजिटिव मूड वाली महिलाओं में शोध के चिन्हकों सी-रिएक्टिव प्रोटीन और इंटरल्यूकिन-6 का स्तर भी कम पाया गया। इन उदाहरणों का तात्पर्य यह है कि हमें अच्छी जीवनशैली के लिए लोगों की मदद करनी चाहिए। उन चीजों को समझने में मदद करनी चाहिए जिससे वे जीवन से संतुष्ट हो सकें और ज्यादा समय सकारात्मक चीजों पर दे सकें।

वेदों में भी व्यक्ति और प्रसन्नता की चर्चा है। तनाव को कुछ और नहीं, बल्कि इसे पहले से पता स्थिति के प्रति मस्तिष्क और शरीर की प्रतिक्रिया बताया गया है। तनाव से हम तब तक ठीक तरह निबट नहीं सकते जब तक कि हम तनाव की बनी-बनाई गई व्याख्या को बदल नहीं देते। ऐसा संभव है सकारात्मक विचारों से। शंकराचार्य हों या पतंजलि-सबों ने इसकी शिक्षा दी है। बुद्ध ने प्रासंगिकता के हिसाब से विचारों में परिवर्तन का मार्ग बताया था। प्रसन्न रहने से शरीर में ऐसे हार्मोन पैदा होते हैं, जो तनाव को कम करने में मदद करते हैं। यही वजह है कि अब तमाम अस्पतालों में तनावरहित माहौल पैदा करने की कोशिश की जा रही है ताकि हंसी-खुशी के माहौल में मरीज जल्द और बेहतर तरीके से रोगमुक्त हो सकें। ■

प्रेरक कथा

संत की निडरता

सम्राट सिकंदर बड़ा ही शक्तिशाली शासक था। बड़े से बड़े राजा-महाराजा भी उसके नाम से कांपते थे। एक बार सिकंदर कहीं से लौट रहा था। रास्तें में उसे एक संत मिले। सिकंदर ने उनसे प्रार्थना की– महाराज, आप मेरे राज्य में आकर रहिए। संत ने सिकंदर की ओर देखा और उत्तर दिया– ऐसा नहीं हो सकता। सिकंदर को क्रोध आ गया। उसने संत को घूरते हुए कहा– तुम जानते नहीं कि मैं कौन हूं। मैं सम्राट सिकंदर हूं। तुम्हें पता होना चाहिए कि मेरी बात न मानने का परिणाम क्या होता है, जानते हो?

संत शांत स्वर में बोले–क्या होता है? सिकंदर ने कड़ककर कहा–मेरे हाथ में तलवार है। जो मेरा कहा नहीं मानते, उनका काम तमाम हो जाता है। देख लो, तुम मारे जाओगे। संत मुस्कराते हुए बोले– किसे डराते हो तुम? मुझे मृत्यु का कोई भय नहीं। मौत में अब मुझे मारने का दम नहीं है। फिर थोड़ा रुककर उन्होंने आगे कहा– जो मृत्यु से डरता नहीं, उसका तुम कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। सिकंदर संत की निडरता देखकर और उनकी बात सुनकर चकित रह गया। उसके हाथ से तलवार छूटकर नीचे गिर गई। उसने मन ही मन कहा– जिससे मौत भी डर गई है, उसे दुनिया की कोई भी ताकत नहीं डरा सकती। तलवार तो उन्हीं लोगों को डरा सकती है, जो कमजोर होती है।

–प्रस्तुति: **बिन्दू पगारिया**, बैंगलोर

पाथेय

नरेन्द्र देवांगन

जब अंजना के दूध से पहाड़ फट गया

आज तक हनुमान तन-मन से श्रीराम व जानकी की सेवा में लगे हुए हैं। माता अंजना का आशीर्वाद उनके साथ है।

लंका-विजय के पश्चात श्रीराम भरत से मिलने के लिए व्यग्र हो उठे। उन्होंने विभीषण का आतिथ्य स्वीकार नहीं किया। तब विभीषण ने श्रीराम के सम्मुख पुष्पक विमान उपस्थित कर दिया। उस पर श्रीराम की आज्ञा से विभीषण, हनुमान, वानरों, भालुओं के साथ सुग्रीव और अंगद भी चढ़ गये। विमान आकाश मार्ग से उड़ चला। श्रीराम ने सीता को ऊपर से ही चित्रकूट के वध-स्थल दिखाये। सेतुबांध, शिवस्थापना आदि स्थल भी उन्होंने दिखाये। इतने में ही विमान किष्किंधा के ऊपर आ गया और वहीं उतरा।

विमान के उतरते ही सुग्रीव की आज्ञा से तारा आदि स्त्रियां सीता के समीप पहुंची। सीता की इच्छा से सुग्रीव की रानियां भी श्रीराम के साथ अयोध्या में राज्याभिषेक का उत्सव देखने चलीं। तभी हनुमान ने श्रीराम से विनयपूर्वक कहा-''प्रभो! मेरी माता के दर्शन किये हुए काफी

समय बीत गया है। यदि आज्ञा हो तो मैं अपनी माता के चरणों को स्पर्श कर आऊं?

श्रीराम ने प्रसन्नता से कहा- ''हम भी माता के दर्शन करेंगे। वे केवल तुम्हारी ही नहीं बल्कि हमारी माता भी हैं।''

विमान कांचनगिरि के लिए उड़ा। विमान के उतरते ही सभी हनुमान की माता अंजना के दर्शन के लिए चल पड़े। माता अंजना ने अपने लाल हनुमान को बहुत दिनों के बाद देखा। देखते ही वे सजल नेत्रों से अपने बेटे के सिर पर हाथ

फेरने लगीं। उसी समय वहां सीता और लक्ष्मण के साथ श्रीराम भी पहुंचे। हनुमान ने अपनी माता से विनयपूर्वक कहा- ''माते! ये हमारे प्रभु श्रीराम, ये माता जानकी तथा ये लक्ष्मण हैं।''

परिचय पाकर अंजना उन सबके चरणों में गिरने ही जा रही थी कि श्रीराम ने उनके चरण-स्पर्श कर उन्हें प्रेमपूर्वक बैठाया। सीता और लक्ष्मण ने भी उन्हें प्रणाम किया।

यह सब देख-सुनकर अंजना अपने भाग्य पर गर्व करने लगीं। उन्होंने अति हर्ष के साथ कहा- ''आज मैं धन्य-धान्य हो गयी हनुमान जैसे पुत्र को पाकर जिसके कारण आज भगवान श्रीराम मेरे यहां पधारे हैं।''

इसके बाद हनुमानजी ने सीता-हरण, रावण-कुंभकरण-मेघनाद के वध की कथा अपनी माता को सुनायी। यह सुनते ही कि हनुमान के होते हुए श्रीराम को रावणादि का वध करना पड़ा, माता अंजना ने कुपित होकर हनुमान को अपनी गोद से धकेल दिया। उन्होंने क्रोधपूर्वक कहा- ''तूने व्यर्थ ही मेरी कोख से जन्म लिया। मैंने तुझे व्यर्थ ही अपना दूध पिलाया। तुझे, तेरे बल व पराक्रम को धिक्कार है। क्या तू उस दुष्ट रावण एवं उसके सैनिकों को नहीं मार सकता था? और, यदि तू उन्हें मारने में असमर्थ था तो उनसे युद्ध करता हुआ स्वयं वीरगति को प्राप्त कर लेता, लेकिन तेरे जीवित रहते हुए भी प्रभु श्रीराम को सेतुबंधन, राक्षसनाश के लिए युद्ध करना पड़ा? तूने मेरे दूध को लज्जित कर दिया।''

माता से उपराग सुनकर हनुमानजी हाथ जोड़कर बोले-''माते! मैंने तो तेरे दूध को कभी लज्जित नहीं किया। मैंने वह सब कुछ किया जिसका आदेश मेरे प्रभु श्रीराम ने दिया। प्रभु तुम्हारे सम्मुख हैं, तू स्वयं ही इनसे पूछ ले।''

इस पर जांबवान ने हाथ जोड़ कर विनयपूर्वक माता अंजना से कहा- ''मां! आपका पुत्र हनुमान बिल्कुल सत्य कह रहा है। आपके दूध के प्रताप से इनके लिए कुछ भी असंभव नहीं है। यदि वे मनमानी करते तो श्रीराम के यश का विस्तार कैसे होता?''

श्रीराम ने भी जांबवान की बात का अनुमोदन किया। तब माता अंजना का क्रोध शांत हुआ। उन्होंने गंभीर होकर हनुमान से कहा- ''अरे बेटा हनुमान! यह सब मैं नहीं जानती। मुझे आश्चर्य हुआ कि मैंने जिस बालक को अपना दूध पिला कर पाला, वह इतना कायर कैसे हो गया कि उसके होते हुए स्वामी श्रीराम को कष्ट उठाना पड़ा?

माता अंजना के बार-बार अपने दूध की प्रशंसा को लक्ष्मण अतिशयोक्ति समझ रहे थे। माता अंजना ने लक्ष्मण के विस्मय को उनके मुख से समझ लिया कि इन्हें मेरी बातों पर संदेह हो रहा है। अत:, माता अंजना ने तुरंत स्पष्ट किया- ''बेटे लक्ष्मण! मेरा दूध असाधारण है। प्रत्यक्ष प्रमाण तुम स्वयं देख लो।''

इतना कहकर माता अंजना ने अपने स्तन के दूध की धार जैसे ही समीपस्थ पर्वत शिखर पर छोड़ी वैसे ही वज्रपात हुआ। भयानक स्वर के साथ वह पर्वत फटकर दो भागों में विभक्त हो गया। माता अंजना का समस्त वानर-भालुओं ने चकित होकर जय-जयकार किया।

तब माता अंजना ने कहा- ''लखनलाल, मेरा यह दूध हनुमान ने पिया है। मेरा दूध कभी व्यर्थ नहीं जा सकता। मां का दूध ही उसके पुत्र की शक्ति होता है। वह कभी नहीं लजाता है।''

प्रसन्न मुख से श्रीराम ने हाथ जोड़ कर माता अंजना से चलने की अनुमति मांगी। तब अंजना ने कहा- ''प्रभो! आपने दर्शन देकर मुझे कृतार्थ कर दिया। फिर भी, मेरी एक प्रार्थना है कि आप मेरे प्रिय हनुमान को अपना भक्त बनाकर इसे सदा अपने चरणों में स्थान दें।''

हनुमान ने माता अंजना से आशीर्वाद मांगा। अंजना ने कहा- ''तू सदा निष्कपट भाव से अत्यंत श्रद्धापूर्वक श्रीराम और माता जानकी की सेवा करते रहना।''

उसके बाद पुष्पक विमान पर सवार होकर सभी आयोध्या के लिए चल पड़े। तब से आज तक हनुमान तन-मन से श्रीराम व जानकी की सेवा में लगे हुए हैं। माता अंजना का आशीर्वाद उनके साथ है।

–उमेश फोटो स्टूडियो, पो. खरोरा
रायपुर-493225 (छत्तीसगढ़)

साधना का प्रथम द्वार मौन

साध्वी अणिमाश्री

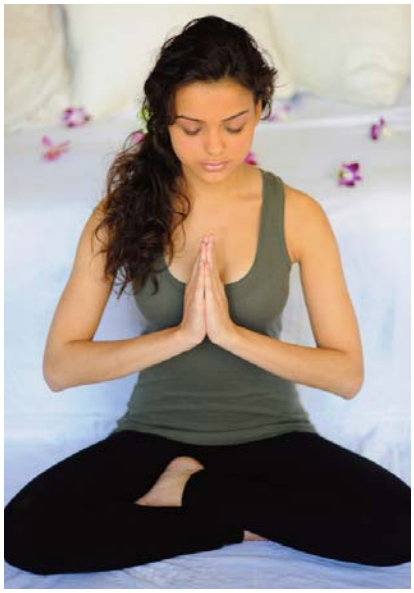

शास्त्रकारों ने मित भाषा को भी मौन की अभिधा से अभिहित किया है। जो कथन किसी के लाभ, कल्याण, हित व क्षेम के लिए किया जाता है, उसे भी मौन की श्रेणी में लिया है।

एक बार ऋषि भास्कलि ने अपने गुरु से जिज्ञासा करते हुए पूछा-भगवन्! ब्रह्मज्ञान को कैसे प्राप्त किया जा सकता है? शिष्य की इस जिज्ञासा का आचार्य ने कोई उत्तर नहीं दिया। कहते हैं कि एक बार नहीं बल्कि सात बार भास्कलि ने इस प्रश्न को अपने गुरु के समक्ष दोहराया किन्तु आचार्य देव सातों ही बार चुप रहे। शिष्य कुछ भी समझ नहीं पाया। अन्ततः गुरु ने कहा-वत्स! मैंने तो हर बार तेरे प्रश्न का उत्तर दिया है पर तू समझ नहीं रहा है। तू जिस ब्रह्मज्ञान प्राप्ति का उपाय पूछ रहा है उस ब्रह्म को वाणी से कहा नहीं जा सकता। उसे तो मौन होकर ही समझा और पाया जा सकता है। वस्तुतः आध्यात्मिक क्षेत्र में मौन का विशिष्ट स्थान है। यह एक ऐसी व्यवस्थित साधना है, जिसे अजमाकर मनुष्य अपनी चित्तवृत्तियों को बिखरने से बचा सकता है। मौन से जीवनी शक्ति तथा प्राणशक्ति परिपुष्ट बनती है। व्यक्ति को अपने भीतर नई स्फूर्ति और नई ताजगी का अनुभव होता है। शारीरिक दृष्टि से चुप रहने से वाणी एवं उसके साथ व्यय होने वाली मस्तिष्कीय शक्तियों की क्षति होने से बचती है।

बहुधा व्यक्ति आनंद की खोज में इतस्ततः भटकता रहता है किन्तु जो वस्तु जहां है ही नहीं, वह वनों, कुंजों, कन्दराओं में कैसे मिल सकती है? क्षणिक आनंद की उपलब्धि चाहे हो जाए लेकिन स्थिर और स्थायी आनंद तो तभी प्राप्त होगा, जब व्यक्ति तन-मन और वचन से मौन व्रत को धारण करके अपने अंतस्तल में झांकेगा और आत्मपरायण बनकर वहीं रमण करेगा। अनुभवी जनों का कथन है कि जब व्यक्ति इस सांसारिक कोलाहल से अपने मन को हटाकर अंतरात्मा की धूरी पर अपने मन को केन्द्रित कर लेता है तब आत्मा से परमात्मा बनने का जो संदेश है, उसे सुना जा सकता है। चंचल मन तथा चंचल वाणी उस दिव्य आत्मिक संदेश को सुन नहीं पाते। अन्तर्मुखी बनकर ही मौन को साधा जा सकता है और अंतस्तल में बह रहे आनंद के स्रोत को प्रस्फुटित किया जा सकता है।

अध्यात्म क्षेत्र में वाक् सिद्धि का प्रयोजन भी मौन का अभ्यास करने से ही सफल होता है। निरंतर बोलते रहने से वाणी की प्रभावकता क्षीण होने लगती है। महात्मा गांधी अपना अधिक समय मौन में ही व्यतीत करते थे। उनकी आत्मकथा पढ़ने से ज्ञात होता है कि वे प्रति-सप्ताह एक दिन मौन करते थे। उनका यह अनुभव था कि मौन से बड़ा विश्राम मिलता है और कार्य करने के लिए नई शक्ति का अनुभव होता है। आचार्य तुलसी प्रायः प्रतिदिन नियमित मौन साधना करते थे। वे कहा करते थे कि मौन करने से मुझे आंतरिक आनंद की अनुभूति होती है। यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि मौन व्रत की साधना के साथ यदि मनोवृत्तियों को आत्म-चिंतन में लगा दिया जाए तो आध्यात्मिक आनंद का निर्झर बहने लगता है।

महान संत महर्षि रमण के बारे में यह कहा जाता है कि वे सदैव मौन रहते थे किन्तु मौन रहते हुए भी अपने निकट आने वालों की गहनतम शंकाओं का समाधान कर देते थे। वस्तुतः मौन एक अंतर्भाषा है। प्राचीन ऋषि अपने शिष्यों को मौन के द्वारा ही उपदेश देते थे। मौन साधना से वे सब सिद्धियां मिल सकती हैं, जो अन्य कठिन योग साधनाओं से मिलती हैं। योग के मर्मज्ञ आचार्यों ने वाणी के चार प्रकार बतलाए हैं- परा, पश्यन्ति, मध्यमा और वैखरी। इनमें से परा वाणी नाभि में, पश्यन्ति हृदय में, मध्यमा वाणी कंठ में और वैखरी वाणी मुख में निवास करती है। शब्दोत्पत्ति परा वाणी में होती है परन्तु जब शब्द स्थूल रूप धारण करता है तब मुख में स्थित वैखरी वाणी द्वारा बाहर निकलता है। इनमें परा और पश्यन्ति सूक्ष्म तथा मध्यमा व वैखरी स्थूल है। साधकों को इन चारों का संयम और सदुपयोग करना चाहिए।

यद्यपि हमारे व्यावहारिक जगत में भाषा ही संपर्क का सेतु बनती है किन्तु नीतिकार कहते हैं कि जिह्वा खोलने से पहले एवं शब्दोच्चारण करने से पहले यह विचार करना चाहिए कि मुझे क्या कहना है? कितना कहना है? अनावश्यक वाणी का वर्जन और आवश्यक कथन ने भी संयम करते हुए संयत भाषा का प्रयोग करना बहुत बड़ी साधना है। योग साहित्य में मौन दो प्रकारों की चर्चा है- बहिर्मौन एवं अंतर्मौन। पहले मौन का सीधा संबंध वाणी से है एवं दूसरी विधा का संबंध मन से जुड़ा हुआ है। वाणी को वश में करना, कम बोलना, नहीं बोलना, जरूरत से अधिक नहीं बोलना- ये सारे प्रयोग बहिर्मौन को पुष्ट करने वाले हैं। मन को स्थिर रखना मन में बुरे विचारों को न आने देना, अशुभ एवं असद् विचारों से मन को हटाकर आत्मोन्मुखी बनाए रखना, इंद्रिय व मन को नियंत्रित रखना यह अंतर्मौन कहलाता है।

शास्त्रकारों ने मित भाषा को भी मौन की अभिधा से अभिहित किया है। जो कथन किसी के लाभ, कल्याण, हित व क्षेम के लिए किया जाता है, उसे भी मौन की श्रेणी में लिया है। ऊर्ध्वारोहण की दिशा में मौन की महत्वपूर्ण भूमिका है। आत्मोत्कर्ष के पथ पर आगे बढ़ने के लिए मौन सशक्त संबल बनता है। शाश्वत सुख के अभिलाषी व्यक्ति को मौन साधना का निरंतर अभ्यास करना चाहिए। प्रायः जितने भी ख्यातनामा ऋषि-महर्षि इस धरती पर हुए हैं, उन सभी ने कमोबेश रूप में मौन की महिमा ही नहीं गायी बल्कि उसे अपने जीवन में सिद्ध किया है।

मानसिक तनाव, उद्विग्नता एवं अशांति के क्षणों में मौन का अभ्यास करने वाला व्यक्ति स्वयं को तनाव तथा अशांति से बचा लेता है। मुनि के लिए विशेष रूप से कहा गया-''मुनिर्मौनपरो भवेत्। मौन व्रत में ही मुनि की प्रतिष्ठा सुरक्षित है। कई बार जो काम बोलने से नहीं होता, वह मौन से सहज सरल बन जाता है इसलिए विज्ञ वही कहलाता है, जो सोच-समझकर सीमित एवं अर्थपूर्ण शब्दों का प्रयोग करता हो। अपेक्षा यह है कि मौन का महत्व समझकर व्यक्ति इसे अपने जीवन व्यवहार के धरातल पर प्रायोगिक रूप दें। ■

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका निम्न वेबसाइट पर भी उपलब्ध है:
www.sukhiparivar.com
www.herenow4u.net
www.checonjainam.org

जीवन को जीना सीखिए

● नीना राठौड़ ●

स्वस्थ जीवन के लिए स्वस्थ वातावरण के लिए शांति, शांति के लिए प्रेम, प्रेम के लिए स्वस्थ मन और स्वस्थ मन के लिए जरूरी है, मन के सरोवर में उठ रही अविद्या, अहंकार, द्वेष और मोह की लहरों का शांत होना। चित्त की यही शांति स्वस्थ वातावरण का निर्माण करेगी और यही स्वस्थ वातावरण जीवन का नियामक बनेगा।

शांत होना शक्ति की सबसे बड़ी अभिव्यक्ति है भूलवश कभी भी मन की शांति को मंदबुद्धि या आलस्य की संज्ञा न दे डालियेगा। चंचल या क्रियाशील होना तो बहुत ही आसान है। बस, आप लगाम ढीली छोड़ दें, तो घोड़े आपको खुद ही भगा ले जायेंगे। भले ही वे आपको कहीं दूर ले जाकर पटक दें, गिरा दें। शक्तिमान तो वह है, जो इन तेज घोड़ों को थाम सके। इसलिए बहुत जरूरी है मन में क्लेश पैदा करने वाली लहरों की चंचलता पर काबू पाना, बहुत जरूरी है मन की यह शांति।

यदि किसी तालाब का पानी गंदला हो, तो हम उसकी तली तो नहीं देख सकते, लेकिन यदि पानी साफ और स्वच्छ भी हो, तो भी हम उसकी तली नहीं देख सकते, यदि सारे समय उसमें हलचल ही होती रहे। उस तली की झलक मिलना, तो तभी संभव है, जब सारी लहरें शांत हों।

जब तक आप अपने मन की चंचलता पर काबू नहीं पा लेते आपके मन रूपी सरोवर में जब तक एक ही लहर रहेगी, तब तक अस्वस्थ वातावरण आप पर हावी रहेगा। अपने अंदर-बाहर कहीं भी आप स्वस्थ वातावरण का निर्माण नहीं कर पायेंगे। याद रखें, अपने दुर्भाग्य एवं कठिनाइयों के लिए जिम्मेदार आप खुद हैं। आपने खुद अपने मन के अंदर ऐसे वातावरण का निर्माण किया है, जिसने आपके बाहरी वातावरण को भीचारों ओर से दूषित कर दिया है।

यदि आप पर्वत की चोटी पर उगा हुआ देवदार का वृक्ष नहीं बन सकते, तो घाटी का छोटा वृक्ष बनिए, झरने के निकट का एक सुंदर छोटा वृक्ष बनिए और यदि वृक्ष भी न बन सकें, तो झाड़ी बनिए, यदि झाड़ी भी न बन सकें तो वह घास बनिए, जो मार्ग को सुगम बना सके। यदि आप कस्तूरी मृग नहीं बन सकें तो एक मछली ही बनिए, झी की सुंदरतम मछली जो मन को मोहित कर दे।

हम कभी कप्तान नहीं बन सकते, हमें नाविक बनना होगा। हम सब के लिए कुछ न कुछ कार्य है ही छोटा हो या बड़ा, हमारा काम हमारे पास ही है। यदि आप राजमार्ग नहीं बन सकें, तो पगडण्डी ही बनिए। यदि आप सूरज न बन सकें, तो तारा ही बनिए, क्योंकि केवल आकार से ही मनुष्य की सफलता-असफलता का निर्णय नहीं होता। आप अपनी स्वाभाविकतानुसार श्रेष्ठ बनिए।

-प्राचार्या, टैगोर विद्या भवन
मेजर शैतानसिंह कॉलोनी
शास्त्रीनगर, जयपुर-16 (राज.)

रोगनाशक है अंकुरित भोजन

मुरली कांठेड़

शाकाहार का पूरा-पूरा लाभ हमें तभी मिल सकता है जब हम अपने भोजन को कम से कम पकने दें या फिर उन्हें उबाल कर खाएं। जरूरत से ज्यादा देर तक पकाने से व्यंजन स्वादिष्ट जरूर पकता है किन्तु उनके प्राकृतिक गुण नष्ट हो जाते हैं। समय एवं ईंधन की बर्बादी अलग होती है। अधिकांश कन्दमूल, फल एवं साग हम कच्चे खाते हैं।

पत्ता गोभी, ककड़ी, गाजर, मूली और प्याज से बनाए जाने वाला, सलाद शरीर में पौष्टिक तत्वों की पूर्ति करता है। अंकुरित अन्न केवल स्वास्थ्यवर्धक ही नहीं, बल्कि रोगनाशक सजीव

भोजन है। अंकुरित अन्न खाने से रोगों की संभावनाएं काफी कम होती हैं और मनुष्य स्वस्थ जीवन जीते हुए दीर्घायु प्राप्त करता है।

अंकुरित अन्न बनाने की विधि

देशी चना, साबुत मूंग, लोबिया या मटर, कच्ची मूंगफली या तिल, गेहूं या सोयाबीन आदि अन्नों को शीत एवं ग्रीष्मऋतु में निम्न रूप से अंकुरित कर सकते हैं। जिन अन्नों को अंकुरित अन्न बनाना है उन्हें प्रातः पानी में भिगोकर ढक कर रख दें।

शाम को पानी से निकाल कर उस अन्न को किसी बंद डिब्बे में या फिर मोटे कपड़े की पोटली में बांधकर रख दें। अगले दिन अंकुरित अन्न खाने के लिए तैयार मिलेगा।

खाने की विधि

आइये अब थोड़ी चर्चा अंकुरित अन्न को अन्य चीजों के साथ मिलाकर कैसे खाएं, इस संदर्भ में कर लें।

- सादा पानी और अंकुरित अन्न
- शहद और अंकुरित अन्न
- सेंधा नमक और अंकुरित अन्न
- गुड़ और अंकुरित अन्न
- कच्ची खांड और अंकुरित अन्न
- फल और अंकुरित अन्न
- सलाद और अंकुरित अन्न
- मठ्ठा और अंकुरि अन्नख
- सब्जियों के जूस-सूप के साथ अंकुरित अन्न
- कढ़ी और अंकुरित अन्न
- केला और अंकुरित अन्न
- हल्की भाप में अंकुरित अन्न
- बेल गिरी और अंकुरित अन्न
- आम और अंकुरित अन्न
- पपीता और अंकुरित अन्न

अंकुरित अन्न में पौष्टिक तत्व पूर्ववत् रहते हैं। यही वजह है कि अंकुरित अन्न का सेवन करने वाले जीने के लिए खाते हैं न कि खाने के लिए जीते हैं। अतः अच्छा यही होगा कि हम अपने बच्चों में अंकुरित अन्न के सेवन की आदत डालें। फास्ट फूड की आदत छुड़ाएं, क्योंकि 'फास्ट फूड' से मोटापा बढ़ता है।

मनुष्य पर रंगों का प्रभाव

रंग हमारे शरीर और मन को विविध प्रकार से प्रभावित करते हैं। उससे रोग मिटते हैं, फिर चाहे वे रोग शारीरिक हों या मानसिक।

:: आचार्य महाप्रज्ञ

रंगों का भी अपना चमत्कार होता है। उसका शरीर, मन और भावना के स्तर पर बहुत प्रभाव होता है। इस शताब्दी में पश्चिम जगत में कलर थेरेपी और कीमो थेरेपी का बहुत प्रचलन रहा है। प्रकाश का उनचालीसवां प्रकंपन रंग है। जैसे सूर्य की किरणों का असर होता है, वैसे ही रंगों का असर होता है। वह भी तो प्रकाश ही है। हम स्वयं अनुभव करते हैं, जिस दिन आकाश बादलों से घिरा रहता है, अग्नि मंद हो जाती है, शरीर सुस्ताने लग जाता है, धूप होती है तो आदमी में स्फूर्ति होती है।

जैसे सूरज के ताप और प्रकाश का हमारे शरीर पर प्रभाव होता है, वैसे ही रंगों का प्रभाव भी हमारे शरीर और मन पर होता है। रंग का हमारे चिंतन और जीवन के साथ बहुत गहरा संबंध है। रंग हमारे शरीर और मन को प्रभावित करता है। कलर थेरेपी आज चल रही है। एक पद्धति है कॉस्मिक रे थेरेपी अर्थात दिव्य-किरण चिकित्सा। रंग और सूर्य की किरण, दोनों के साथ इसका संबंध है। प्रकाश के साथ वह संयुक्त है। रंग हमारे शरीर और मन को विविध प्रकार से प्रभावित करते हैं। उससे रोग मिटते हैं, फिर चाहे वे रोग शारीरिक हों या मानसिक। मानसिक रोग चिकित्सा में भी रंग का विशिष्ट स्थान है। रंग थोड़ा-सा विकृत हुआ, आदमी पागल हो जाता है। रंग की पूर्ति हुई, आदमी स्वस्थ बन जाता है। शरीर में रंग की कमी के कारण अनेक बीमारियां उत्पन्न होती हैं। कलर थेरेपी का यह सिद्धांत है कि बीमारी के कोई कीटाणु नहीं होते। रंग की कमी के कारण बीमारी होती है। जिस रंग की कमी हुई है, उसकी पूर्ति कर दो, आदमी स्वस्थ हो जाएगा, बीमारी मिट जाएगी।

प्रत्येक व्यक्ति के शरीर के आस-पास रंग का एक आभामंडल है। उसमें अनेक रंग होते हैं। किसी के आभामंडल का रंग काला होता है, किसी का नीला और किसी का लाल और सफेद। आभामंडल अनेक वर्णों का भी होता है।

चिंतनः रंग

हमारे चिंतन के साथ भी रंगों का संबंध है। जब मन में खराब चिंतन आता है, अनिष्ट बात उभरती है, अशुभ विचार आते हैं तब चिंतन के पुद्गल काले वर्ण के होते हैं, लेश्या कृष्ण होती है। अच्छा चिंतन करते हैं, हित-चिंतन करते हैं, शुभ विचार आते हैं और श्वेत वर्ण के भी हो सकते हैं। उस समय तेजोलेश्या होगी या पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या होगी। बुरी चिंतन के पुद्गलों का वर्ण है काला और अच्छे चिंतन के पुद्गलों का वर्ण है पीला, लाल या श्वेत। जिस प्रकार का चिंतन होता है उसी प्रकार रंग होता है। प्रत्येक व्यक्ति के शरीर के आस-पास रंग का एक आभामंडल है। उसमें अनेक रंग होते हैं। किसी के आभामंडल का रंग काला होता है,

किसी का नीला और किसी का लाल और सफेद। आभामंडल अनेक वर्णों का भी होता है।

सूक्ष्म जगत का रहस्य

हम सूक्ष्म जगत् को देखें। कोई भी दुनिया का ऐसा रंग बाकी नहीं है, जो हमारी आंखों के समाने न हो। कोई भी ज्योति के पुंज और परमाणु ऐसे नहीं है, जो हमारी आंखों के सामने न हों। जितने वर्ण, जितने गंध, जितने रस और जितने स्पर्श इस दुनिया में श्रेष्ठ या अश्रेष्ठ मिलते हैं, वे सारे के सारे हमारी आंखों के सामने नृत्य कर रहे हैं किन्तु उन्हें हम पकड़ नहीं पा रहे हैं। इन आंखों से सौ वर्ष तक देखते चले जाएं फिर भी नहीं पकड़ पायेंगे। प्रश्न है हमें क्या करना होगा? जैसे ही प्राण में मन को सम किया और सूक्ष्म जगत् के साथ हमारा संपर्क स्थापित हो गया, फिर रंग दिखाई देंगे, ज्योति दिखाई देगी, विचित्र प्रकार की दुनिया दिखने लग जाएगी। यह कोई काल्पनिक दुनिया नहीं है। विचित्र सृष्टि हमारे आस-पास विद्यमान है, उसे देखने की क्षमता होनी चाहिए। जिसने सूक्ष्म जगत् में प्रवेश किया,, जिसका संपर्क हो गया, उसे विचित्र प्रकार की दुनिया दिखाई देने लग गई।

कभी-कभी ध्यान में इस प्रकार के रंगों का दर्शन होता है कि वैसे रंग इस दुनिया में देखने को कभी नहीं मिलते। सुंदर, तेज और ज्योतिर्मय। शायद बाहरी दुनिया में इन स्थूल आंखों से वैसे रंगों को देखने का स्वप्न भी नहीं ले सकते। जब हमारा सूक्ष्म जगत् के साथ संपर्क स्थापित होता है, सारी बातें घटित होने लग जाती हैं, शब्द भी सुनाई देने लग जाते हैं क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में या अपर-मस्तिष्क में ऐसे यंत्र है, जिनसे सूक्ष्म बातों को भी सुन सकते हैं। जब अंतर-शक्ति काम करने लग जाती है, तब ये

सारी बातें घटित होने लग जाती हैं। यह न कोई चमत्कार है, कोई प्रदर्शन है। यह केवल सूक्ष्म जगत् में प्रवेश करने का एक प्रयोग है, प्राण और मन को सुषुम्ना में ले जाने का प्रयोग है।

प्राण-प्रयोग

हम संकल्प को सिद्ध कर मन को सुषुम्ना में ले जा सकते हैं। जब संकल्प के द्वारा हाथ ऊपर जाने लगता है तब करेंट का धक्का-सा आता है। यह प्राणधारा है। जिधर हमारा संकल्प जाता है, उधर ही प्राण की धारा का मुक्त प्रवाह हो जाता है। संकल्प के साथ-साथ प्राण जाता है। भगीरथ के पीछे जैसे गंगा चली थी या आदमी के पीछे-पीछे छाया चलती है, वैसे ही संकल्प के साथ-साथ प्राण की धारा चलती है। जिस दिशा में संकल्प कर लिया, उस दिशा में ही प्राण की धारा का मुख्य प्रवाह हो जाएगा। प्राण की धारा इतनी तेज हो जाती है कि करेंट का धक्का-सा लगता है, हाथ सहन नहीं कर सकता। अकस्मात् हाथ इस प्रकार उछलता है मानो किसी ने आकर झटका दिया है। हमारे भीतर जो तैजस शरीर है, जो प्राणशक्ति है, उसकी गति तीव्र हो जाती है। वह झटका देती है। यह प्राण का प्रयोग है। ■

न्यारी महिमा नाम की

■ जगजीत सिंह

दो अजनबी मिले तो पहली ख्वाहिश एक-दूसरे का नाम जानने की होती है। बाकी बातें बाद में। किसी भी फार्म में सबसे पहला कॉलम नाम का ही होता है। पूरा नाम, इनीशियल्स नहीं। नाम से व्यक्ति सब जगह हो सकता है। दौलत की भूख जितनी ही उत्कट होती है नाम कमाने की भूख। आलम यह है कि कई लोगों की जिंदगी का एक कीमती हिस्सा अधिक से अधिक नाम कमाने की कोशिश और कवायद में निकल जाता है- चाहे उसके लिए कितना ही दाम चुकाना पड़े। नाम कमाना उनके लिए एक नशा बन जाता है। कितनी ही शख्सियतों को हमने देखा तक नहीं होता, सिर्फ उनके नाम के आगे श्रद्धा से सिर झुकाते हैं। वह नाम जो उन्होंने नेक कर्म से अर्जित किया। कई के नाम की चर्चा भर से भौहें तन जाती हैं, हिकारत के भाव उभर आते हैं। नाम इंसान में खुशी भी पैदा करता है और ईर्ष्या भी। उसका अपना कोई प्रियजन नाम कमाये तो मन में खुशी के फव्वारे चलने लगते हैं। विरोधी का नाम ऊंचा हो तो सीने में जलन होती है।

नाम बचाने के लिए भी इंसान कई तरह के उपक्रम करता है। जितनी मेहनत नाम कमाने में लगती है, उससे कहीं ज्यादा सावधानी नाम को बचाने में रखनी पड़ती है। नाम जितना बड़ा, ऊंचा और इज्जतदार होगा, उसके डूबने का खतरा उतना ही अधिक होगा। फूंक-फूंक कर रखने पड़ते हैं कदम। गलत दिशा में उठा एक कदम ही बरसों की मेहनत से कमाये गये नाम को मिट्टी में मिलाने के लिए काफी होता है।

व्यक्ति की पहचान का सबसे बड़ा माध्यम है नाम। अध्यात्म में परमात्मा के नाम का जितना महत्व है, भौतिक जीवन में अपने नाम की भी उतनी ही अहमियत है। इंसान इस दुनिया में आता बेनाम है, लेकिन जाता है नाम छोड़कर।

भीड़ में किसी खास शख्स को बुलाना हो तो उसका नाम ही पुकारा जाता है। पैदा होते ही सबसे पहले होता है नामकरण संस्कार। नाम से ही इंसान की जिंदगी शुरू होती है, इसी के सहारे तमाम जिंदगी चलती है और अंत में जब राम नाम सत्य हो जाता है तो याद रखने के लिए नाम ही बचता है। ■

प्रेम–सौहार्द का पर्व होली

:: गणेश मुनि शास्त्री

भारत देश पर्व-त्योहारों का देश है। महीने की सोलहों तिथियां किसी न किसी पर्व-त्योहार से जुड़ी हुई हैं। लेकिन दीपावली और होली इस देश के दो मुख्य त्योहार हैं। दोनों ही त्योहार भारतीय संस्कृति की उत्कृष्टता-महानता का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन दोनों पर्वों की एक विशेषता यह भी है कि वैदिक और जैन दोनों परम्पराओं के लोग होली-दिवाली मिलकर मनाते हैं। दीपावली प्रकाश-पर्व है तो होली रंग पर्व है। होली को कभी मदनोत्सव और वसंतोत्सव के रूप में भी मनाया जाता है।

फाल्गुन का पूरा महीना होली का महीना माना गया है। छह ऋतुओं में चैत्र-वैशाख के दो महीने वसंत ऋतु के हैं। वसंत ऋतुओं का राजा है। प्राकृतिक परिवर्तन की दृष्टि से देखें तो फाल्गुनी पूर्णिमा और चैत्र प्रतिपदा के दो दिनों का होली उत्सव ऋतुराज वसंत के स्वागत का उत्सव है। रबी की फसल- गेहूं, जौ, चना, मटर की खेती पकने लगती है।

होली कैसे मनायी जाती है, उसे आप सभी जानते हैं। माघ सुदी पंचमी की तिथि वसंत पंचमी के रूप में जानी जाती है। इसी दिन पूर्व निश्चित पारम्परिक होली स्थल पर लकड़ी कंडे रखकर होली की स्थापना कर दी जाती है। कहीं-कहीं माघ पूर्णिमा को होली रखी जाती है। फाल्गुन की पूर्णिमा तक होली बढ़ाते हैं और पूर्णिमा की रात को शुभ मुहूर्त पर उसमें अग्नि प्रज्ज्वलित कराते हैं। इसी में जौ की बालें लेकर नवान्न भूनते हैं। भूने हुए जौ को आपस में वितरण करते हुए प्रेम से गले मिलते हैं। दूसरे दिन चैत्र वदी प्रतिपदा का दिन धूल या धूलेंडी के रूप में मनाते हैं। एक-दूसरे पर कीचड़ धूल फेंकते हैं, रंग डालते हैं, गुलाल लगाते हैं। आपस में गले मिलने का सिलसिला दूसरे-तीसरे दिन भी चलता है।

फाल्गुन का पूरा महीना होली का महीना माना गया है। छह ऋतुओं में चैत्र–वैशाख के दो महीने वसंत ऋतु के हैं। वसंत ऋतुओं का राजा है। प्राकृतिक परिवर्तन की दृष्टि से देखें तो फाल्गुनी पूर्णिमा और चैत्र प्रतिपदा के दो दिनों का होली उत्सव ऋतुराज वसंत के स्वागत का उत्सव है।

बुद्धिवादियों और सुधारवादियों का विचार है कि होली पर एक-दूसरे पर कीचड़ डालना, रंग डालना असभ्यता है। इसे बंद कर केवल गुलाल लगाकर गले मिलना चाहिए। मैं आपसे भी पूछता हूं कि केवल गुलाल ही क्यों लगाएं? गुलाल से भी तो चेहरा बिगड़ता ही है। वस्तुतः होली मन की उमंगों का त्योहार है, दिल की मस्ती का त्योहार है। इसीलिए मन या दिल के क्षेत्र में बुद्धि की युक्तियां खड़ी-खड़ी तमाशा देखती है। धूल क्या है, कीचड़ क्या है और रंग का क्या स्वरूप है, इसे आप समझने का प्रयास करें।

धूल-कीचड़-बुराइयों, कषायों और वैर भाव आदि के आंतरिक भावों के स्थूल प्रतीक हैं। साल भर में जो घुटन, मन-मुटाव, वैर भाव दिलों में भर जाते हैं, होली पर वे सब बाहर निकलते हैं, तो गंदगी दिखती है। स्थूल रूप में धूल उड़ाना

बुराइयों पर धूल-कीचड़ डालने की स्थूल परम्परा है। ब्रज क्षेत्र में नंदगांव बरसाने की लठमार होली देखने विदेशों के लोग भी आते हैं। इस अनूठी परम्परा में किसी की बुद्धि क्या सुधार करेगी? नंदगांव कृष्ण का गांव है और बरसाना राधा का। नंद गांव के कृष्ण सखा बरसाने में राधा की सखियों के साथ होली खेलने जाते हैं। इसी तरह बरसाने की गोपियां नंद गांव के ग्वालों से होली खेलने आती हैं। महिलाएं पुरुषों पर लाठी का प्रहार करती हैं और पुरुष ढाल से लाठी प्रहार को बचाते हैं। इस खेल में द्वेष और अश्लीलता का लेश भी नहीं होता। इसे कहते हैं- नंदगांव बरसाने की लठमार होली।

ब्रज की एक अनूठी परम्परा और भी है। कहते हैं किसी गांव के एक परिवार का एक युवक जलती हुई होली में नंगे पांव निकलता है। इस प्रदर्शन के लिए वह युवक एक साल तक साधना करता है।

होली के पीछे एक घटना यह भी बतायी जाती है- विष्णु द्रोही हिरण्यकश्यप अपने विष्णु भक्त पुत्र प्रहलाद को मारना चाहता था। प्रहलाद की बूआ, यानी हिरण्यकश्यप की बहन जिसका नाम होली था, प्रहलाद को गोद में लेकर लकड़ियों के ढेर पर बैठी। होली को यह वरदान प्राप्त था कि वह आग में नहीं जलेगी। लेकिन लकड़ियों में जब आग प्रज्ज्वलित की गई तो प्रहलाद बच गया और होली जल गई। नागरिकों को होली पर इतना क्रोध था कि दूसरे दिन होली की राख उड़ाई गई, उसके कुकृत्यों पर धूल-कीचड़ फेंकी गई। दुष्प्रवृत्ति रूप होली जल गई और सुप्रवृत्ति रूप प्रहलाद सुरक्षित रहा।

होली के गिरने-उठने की कहानी ही होलिकादहन और धूल या धूलेंडी का द्विदिवसीय पर्व है। सचमुच यह प्रेम-मिलन और सौहार्द का पर्व है।

आइए, अब रंग पर विचार करें। द्रव्य रूप में तो हरे-पीले-लाल आदि रंग आपने देखे ही हैं रंग का एक अर्थ लाक्षणिक भी होता है। रंग का लाक्षणिक अर्थ है, प्रभाव-असर। रंग चढ़ना, रंग पड़ना, रंग में रंगना आदि प्रभाव सूचक मुहावरे हैं। उस पर उसका रंग चढ़ गया, उस पर उसका रंग पड़ गया, मैं उसे अपने रंग में नहीं रंग पाया आदि। स्थूल रूप में तो रंग से कपड़े रंग जाते हैं। पर भाव रूप में प्रेम के रंग में मन को रंगे जाने के ही प्रतीक रूप में रंग और गुलाल हैं। होली पर अपने विचार मैंने इन पंक्तियों में व्यक्त किये हैं-

होली के रंग में रंगे,
अपना हृदय विशाल।
तन का रंग मन पर चढ़े, ज
न-जन हो खुशहाल॥
जन-जन हो खुशहाल,
गुलाल की लाली दमके।
वैर-भाव जल जाए,
फसल सोने-सी चमके॥
दोष-द्वेष की धूल,
उड़ाओ भर-भर झोली।
हिलमिल खेलों फाग,
आज है मित्रो! होली॥

हर पर्व या त्योहार के पीछे कोई न कोई कारण या हेतु होता है। प्रहलाद की कथा के हेतु में केवल चमत्कार हैं। जैन परम्परा में होली का जो हेतु है, उसमें जीवन की एक यथार्थ स्थिति है। मानव मन की कमजोरी व जीवन में उतार-चढ़ाव भी हैं। उन्हीं स्वाभाविक स्थितियों में होली के चरित्र का पतन होता है और वह गिरकर फिर उठती है। वह गिरी तो इतनी गिरी कि गिरावट की सीमा तोड़ दी और जब उठी तो उसकी ऊंचाई को देखकर गगन भी छोटा लगने लगा। होली के गिरने-उठने की कहानी ही होलिकादहन और धूल या धूलेंडी का द्विदिवसीय पर्व है। सचमुच यह प्रेम-मिलन और सौहार्द का पर्व है। ■

गणि राजेन्द्र विजय एक प्रेरक व्यक्तित्व

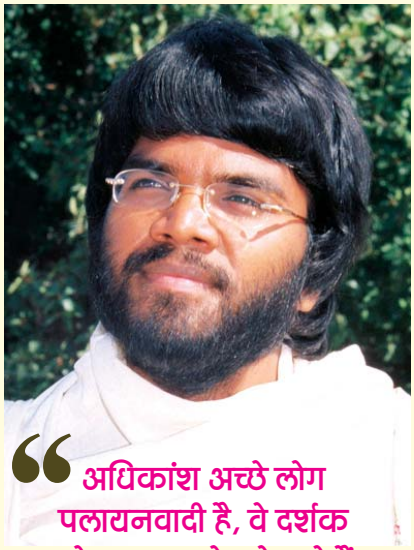

"अधिकांश अच्छे लोग पलायनवादी है, वे दर्शक बने सब कुछ देखते रहते हैं, बुराई का और बुरे व्यक्ति का सामना नहीं कर पाते।"

रूपनारायण काबरा

समृद्ध सुखी परिवार' के मार्गदर्शक पूजनीय ज्योतिर्मय संत गणि राजेन्द्र विजयजी राष्ट्रीय एकता, सर्वधर्म समभाव, अभावग्रस्त आदिवासी के विशिष्ट सेवक, पिछड़े समाज एवं बेसहारा के सहारा, परोपकार भावना से संपूरित महामानव एवं विराट तेजस्वी व्यक्तित्व के धनी, समर्पित समाजसेवी संत का मैं हार्दिक अभिनंदन करता हूं।

आप 'स्वस्थ समाज एवं सुखी परिवार अभियान' के प्रणेता हैं। आप जन-जन के चेतन करके उन्हें बुराई का सामना करने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं, बुराई से लड़ना किसी एक व्यक्ति का काम नहीं है। जब तक सभी व्यक्ति अपने छोटे निजी स्वार्थों को त्याग कर हर स्तर पर अच्छे समाज के निर्माण में योग नहीं देंगे तब तक बुराई को जीतने में सफलता नहीं मिल सकती और यह सत्य है कि बुराई का मुकाबला सिर्फ नैतिक साहस से ही हो सकता है।

आप आम आदमी को निराशा त्यागने एवं साहस जुटाने की प्रेरणा देते हैं तथा जीवन से लुप्त होते सच्चे आनंद की प्राप्ति का दिशाबोध देते हैं। आप कहते हैं, मंजिल का हम सभी को पता है पर हम निस्तेज, निराश, एक ही जगह खड़े हैं, जब तक चलेंगे नहीं लक्ष्य सिद्धि नहीं हो सकती, वे यह भी कहते हैं कि अधिकांश अच्छे लोग पलायनवादी है, वे दर्शक बने सब कुछ देखते रहते हैं, बुराई का और बुरे व्यक्ति का सामना नहीं कर पाते। इसलिए कई दिक्कते खड़ी हो जाती हैं। निर्भीक हुए बिना सुखी परिवार अभियान एवं नैतिक समाज की संरचना मात्र कल्पना बनकर ही रह जायेगी।

महान चिंतक, दार्शनिक, विद्वान लेखक, सृजनात्मक एवं रचनात्मक गतिविधियों के संवाहक, संचालक के रूप में आप स्वस्थ एवं सुखी संतुष्ट परिवार के संवर्द्धन को समर्पित है। आपने एक नई सोच, संकल्प व नई दिशा देकर नव परिवर्तन की अलख जगाई है। आपके कर्तृत्व एवं व्यक्तित्व से निःसृत सौरभ समग्र राष्ट्र को सुवासित करने में समर्थ है। ऐसे तपोपूत मनीषी को शत-शत नमन!

-ए-438, किशोर कुटीर, वैशाली नगर
जयपुर-302021 (राजस्थान)

एक उपचार है टहलना

डॉ. सरयूदेवी लोया

बहुत कम लोग इस महत्वपूर्ण और विश्वस्त उपचार से परिचित हैं। खुली हवा और सूर्य का सहारा लीजिए। ऐसा रास्ता पकड़िए, जो जंगलों की ओर जाता हो या निर्जन हो।

समस्त व्यायामों का फल केवल टहलकर प्राप्त किया जा सकता है, पर साथ ही साथ उसका अपना विशिष्ट फल भी है। अधिक चलने का प्रभाव रक्तप्रवाह पर जबरदस्त पड़ता है।

उपचारों में टहलना सबसे सीधा-सादा उपचार है और सबसे सरल प्राकृतिक क्रिया भी। मात्र आप टहलकर अनेक रोगों से मुक्ति पा सकते हैं। यदि आप मानसिक परेशानी में हैं, तब तुरंत ढीले व सादे सूती कपड़े पहनकर खुली हवा में घूमने निकल जाइए–मील दो मील–जब हल्की थकान का अनुभव हो, रुक जाइए। फिर टहलने चल पड़िए। यह टहलना बड़े से बड़े शोक व दु:ख को दूर कर देगा। यह बिलकुल स्वाभाविक क्रिया है। ऐसे अनेक व्यायाम हैं जो मांसपेशियों के लिए हितकर हैं, किन्तु टहलना उन सबमें पहला और अंतिम व्यायाम है।

जब आप पर किसी कारण से भावनात्मक बोझ आ पड़ा हो, रेल, मोटरटैक्सी सब भूल जाइए। प्रकृति से तादात्म्य प्राप्त कीजिए। टहलिए और लम्बी सांसें लीजिए, अपने फेपड़ों को हवा से भरते जाएं, हवा निकालते जाएं। जब थकावट मालूम हो, लौट आएं। ऐसे समय में रात को बिस्तर पर लेटते ही नींद आ जायेगी। इससे शारीरिक थकान व मानसिक भार हल्का हो जायेगा।

बहुत कम लोग इस महत्वपूर्ण और विश्वस्त उपचार से परिचित हैं। खुली हवा और सूर्य का सहारा लीजिए। ऐसा रास्ता पकड़िए, जो जंगलों की ओर जाता हो या निर्जन हो।

समस्त व्यायामों का फल केवल टहलकर प्राप्त किया जा सकता है, पर साथ ही साथ उसका अपना विशिष्ट फल भी है। अधिक चलने का प्रभाव रक्तप्रवाह पर जबरदस्त पड़ता है। चलने से जांघों की मांसपेशियां कसती हैं और ढीली पड़ती हैं। इससे उसके निकट की नाड़ियां सिकुड़ती हैं। इसके फलस्वरूप मांसपेशियों में रक्त का प्रवाह अधिक तेज और जोरदार हो जाता है। टहलना समाप्त होने के बाद भी काफी समय तक रक्तप्रवाह की तेजी बनी रहती है।

टहलने का प्रभाव हमारी श्वास-प्रणाली पर भी पड़ता है। देर तक चलने के बाद श्वास तेज हो जाती है। इस प्रकार व्यक्ति को अतिरिक्त ऑक्सीजन मिल जाता है। टहलते समय एक लय के साथ सांस लेना हितकर होता है। वह लय हमारे कदमों के अनुरूप होनी चाहिए। चलते समय जितने कदम सांस खिंचते हैं, उतने ही कदम सांस छोड़ने में लगाएं। धीरे-धीरे फेफड़ों की क्षमता बढ़ती जाएगी और अपने आप सांस खींचने व छोड़ने में समय ज्यादा लगेगा। या ज्यादा कदम तक सांस खींचने और ज्यादा कदमों तक सांस छोड़ने में भी ज्यादा समय लगेगा।

टहलने का प्रभाव हमारी श्वास-प्रणाली पर भी पड़ता है। देर तक चलने के बाद श्वास तेज हो जाती है। इस प्रकार व्यक्ति को अतिरिक्त ऑक्सीजन मिल जाता है। टहलते समय एक लय के साथ सांस लेना हितकर होता है। वह लय हमारे कदमों के अनुरूप होनी चाहिए। चलते समय जितने कदम सांस खींचते हैं, उतने ही कदम सांस छोड़ने में लगाएं। धीरे-धीरे फेफड़ों की क्षमता बढ़ती जाएगी और अपने आप सांस खींचने व छोड़ने में समय ज्यादा लगेगा। या ज्यादा कदम तक सांस खींचने और ज्यादा कदमों तक सांस छोड़ने में भी ज्यादा समय लगेगा।

टहलने से शरीर से विजातीय द्रव्य निकलना संभव हो जाता है। सांस विजातीय द्रव्य निकालने का एक साधन है। इसके अतिरिक्त दूसरा साधन है–पसीना। आदमी को पसीना निकलने का भास भले ही न हो, पर त्वचा विजातीय द्रव्य निकालने का काम करती ही है। टहलने का प्रभाव हमारी आंतों व पाचन-प्रणाली पर भी पड़ता है और कब्ज दूर होता है। इस रूप में भी विजातीय द्रव्य निकालने का काम टहलने से हो जाता है।

टहलने से भूख बढ़ती है, इसके लिए किसी प्रायोगिक प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। श्रम पेट की सफाई करेगा और भूख बढ़ायेगा ही। टहलने से सारे शरीर के पूरे अवयव अधिक सक्रिय हो जाते हैं और हम टहलने के बदौलत अपना स्वास्थ्य बनाए रख सकते हैं।

यह सरलतम हल्का व्यायाम है। इस पर आपका स्वयं का नियंत्रण रहता है आप कितनी दूर टहलने जाएं। टहलना एक ऐसा व्यायाम है कि व्यक्ति अपनी इच्छानुसार टहल सकता है। यदि कभी आवश्यकता से अधिक टहल भी लें तो मांसपेशियों में जो तनाव आ जाता है वह शीघ्र ही चला जाता है। घर आकर दस मिनट लेटना भर काफी है। टहलने का व्यायाम करने के लिए किसी शिक्षक की आवश्यकता ही नहीं है।

अक्सर खिलाड़ी व्यक्ति भी वस्तुत: टहलने का काम ही करते हैं, किन्तु पैदल चलने का अभ्यस्त व्यक्ति ज्यादा उम्र होने पर भी इतना टहल लेता है, जितना खिलाड़ी नहीं चल पता। टहलने से मनुष्य में अधिक शक्ति आती है, अधिक सुदृढ़ता आती है। प्रत्येक बार के टहलने में नई कोशिकाओं के बनने के कारण मानव का पुनर्जन्म होता है। अत: हर दिन व्यक्ति का नये रूप में बदलाव होते रहता है। ■

विवेचन

आचार्य विद्यानंद

उत्कोच दान माना जाता था घूस को

उत्कोच शब्द का अर्थ घूस अथवा रिश्वत है। यह एक प्रकार का निंदनीय उपाय माना जाता है, क्योंकि रिश्वत देने वाला व्यक्ति अपना कोई कार्य सिद्ध कराने के लिए उस कार्य के लिए अधिकृत व्यक्ति को गुप्त रूप से धन या वस्तु प्रदान करता है। या इसी तरह किसी काम की देखभाल के लिए बैठाया गया व्यक्ति अपने उस काम के एवज में किसी व्यक्ति से धन अथवा कोई पदार्थ मांगता या लेता है। इस धन या पदार्थ को प्राचीन काल में उत्कोच कहा जाता था। उत्कोच लेने या देने वाला अपने धर्म या कर्तव्य के हिसाब से काम नहीं करता, बल्कि उस धन के लिए करता है। इसीलिए इसे निंदनीय माना गया है। यह एक तरह का दान है, जो निकृष्ट है।

भगवान महावीर के नाना, राजा चेटक से राजा श्रेणिक का पुत्र अभय कुमार एक व्यापारी का रूप बना कर मिलने गया, किन्तु कोतवाल ने उसे महल के अंदर प्रवेश नहीं करने दिया। तब अभय कुमार ने कोतवाल और वहां तैनात सिपाहियों को उत्कोच दान अर्थात घूस देकर भवन में प्रवेश किया। उसने राजा के नजदीक रहने वाले लोगों- कोतवाल, दीवान आदि को घूस देकर उन्हें अपने वश में कर लिया था। आदिपुराण में भी उत्कोच (घूस) लेने का उल्लेख मिलता है। कथा के अनुसार राजा ने अपने राज्य के चांडाल को विद्युच्चोर को मारने का निर्देश दिया। लेकिन चांडाल ने राजा की आज्ञा नहीं मानी। तब राजा ने कहा, इसने कुछ

घूस खा ली है, इसलिए उसने क्रोधित होकर चोर और चांडाल दोनों को निर्दयतापूर्वक सांकल से बंधवा दिया।

आज से चार सौ साल पहले देश की प्रथम आत्मकथा पं. बनारसी दास द्वारा लिखित अद्धकथानक है, जिसका अनुवाद विश्व की अनेकों भाषाओं में हुआ है। इसमें उन्होंने मथुरा से आगरा की अपनी एक यात्रा का जिक्र किया है। इसमें उस समय की घूस लेने और देने की एक घटना का उल्लेख है कि किस प्रकार उन्होंने कोतवाल, दीवान आदि को यथायोग्य धन देकर अपने वश में किया था।

चाणक्य ने अपनी किताब अर्थशास्त्र में लिखा है कि जिस प्रकार सरोवर के जल की सुरक्षा के लिए रखे गए चौकीदार, प्यास लगने पर जल पीने के लिए अपने घर नहीं जायेंगे और उसी सरोवर से जल पीकर अपनी प्यास शांत करेंगे, उसी प्रकार सरकारी कर्मचारी भी अपना राजकीय कार्य करते समय थोड़ी-बहुत घूस तो खाएगा ही खाएगा, उसे कोई भी रोक नहीं सकता।

ऊपर दिए गए उदाहरणों से कुछ बातें स्पष्ट होती हैं। पहली बात यह कि घूस लेने-देने का रिवाज नए जमाने की देन नहीं है, जैसा कि अनेक लोग कहते हैं। यह मानव सभ्यता के बहुत आरंभिक काल से चला आ रहा है। दूसरे यह कि यह संसार लोभ, मायाचार और रिश्वत बिना नहीं चल सकता। हां, इस प्रथा को कम जरूर किया जा सकता है। जैसे याज्ञवल्क्य के समय उत्कोच देने-लेने वालों के लिए कठोर दंड प्रक्रिया थी। उस समय यह मान्यता थी कि रिश्वत ग्रहण करने वाले व्यक्ति को तुरंत उसका सारा धन छीनकर उसे राज्य से निर्वासित कर देना चाहिए। मेरा ऐसा मानना है कि आज भी ऐसे कठोर नियमों की आवश्यकता है। जो नियम बनें, उन्हें कठोरता से लागू किया जाए और उसकी गंभीरता से निगरानी की जाए। पर किसी भी समाज को उत्कोच से मुक्त करने के लिए सबसे जरूरी यह है कि दूसरों को सुधारने से पहले हम स्वयं ईमानदार बनें।

यदि हम समझते हैं कि कठोर कानून बनाने और उसका उल्लंघन करने वालों को कठोर दंड देने भर से कोई समाज उत्कोच से मुक्त हो जाएगा, तो यह भ्रम है। यदि समाज के सदस्य स्वभाव से बेईमान हैं, तो वे घूस लेने का कोई न कोई रास्ता बना ही लेंगे। ■

भोजन कैसा हो ?

रिखबचंद जैन

मनुष्य का भोजन क्या हो? उसे क्या खाना चाहिए और क्या नहीं? यह सवाल अनंतकाल तक चलता रहेगा। दिन में हर एक व्यक्ति, हर एक गृहिणी सोचती है कि उसे आज क्या खाना है? उसे आज क्या भोजन बनाना है? वे चुनाव करते हैं अपनी मन:स्थिति, धनस्थिति, स्वास्थ्य, मौसम और उपलब्धि के आधार पर। भोजन के चुनाव में मन:स्थिति निर्भर करती है—जाति, धर्म, शिक्षा, समुदाय, परिवार, परवरिश और संस्कार पर।

संस्कारों से भारत भूमि में मानव-सभ्यता के अनुरूप सात्विक भोजन को सर्वदा, सर्वदृष्टि से श्रेष्ट और उपयुक्त माना है। सात्विक भोजन शुद्ध शाकाहारी वैष्णव होता है। उससे शरीर पर तो अनुकूल असर पड़ता ही है, मन, विचार और आचरण पर भी वांछित सही असर पड़ता है।

राजसिक और तामसिक भोजन शरीर और विचार दोनों ही दृष्टि से असंगत है। जो लोग कभी-कभार इस तरह के भोजन के आदि हो जाते हैं, उन्हें भी अपने कल्याण के लिए अन्तत: ऐसा भोजन छोड़ना चाहिए। अन्यथा उनकी शारीरिक दुर्गति होती है। शाकाहारी वैष्णव भोजन में भी प्याज, लहसुन अधिक स्वाद या मिर्च मसाले वाली चीजें, राजसिक और तामसिक भोजन के अंग माने गए हैं। अत: जब वैष्णव भोजन पदार्थों में सात्विकता के लिए बहुत से पदार्थ मना हो तो मांस, मछली, अण्डा इत्यादि प्राणीजन्य पदार्थ और मदिरा कैसे सभ्य, संस्कृत व्यक्ति का भोजन बन सकता है। अत: हमें अपने मन, विचार, शरीर, स्वास्थ्य, धर्म, सभ्यता, संस्कृति, जाति और परिवार और मित्रजन को शाकाहारी और सात्विक वैष्णव भोजन ही करना चाहिए। मांस, मछली, मदिरा, अण्डे से बनी वस्तुओं का उपयोग जाने-अनजाने में नहीं करना चाहिए। आधुनिकता, फैशन, प्रोग्रेसिव इत्यादि भ्रांतियों के वश इन वस्तुओं के उपयोग में नहीं फंसना चाहिए। सभ्यता, विकास और ऊंचाई—इन पदार्थों के उपयोग में नहीं, इन्हें छोड़ने में है। शर्म आनी ही चाहिए तो मांसाहारी और मदिरापान करने वालों को, न कि शाकाहारी या सात्विक व्यक्ति को। ऐसे लोगों की मंडली में घिर जाने पर, होटल, मीटिंग, विदेश भ्रमण, शादी-विवाह आदि प्रसंगों पर आप स्वयं और अपने बच्चों को भटक जाने से रोकिये और याद रखिये स्वयं को रोकने वाला ही सम्मान पाने वाला हैं।

-बी-28, अशोक विहार-2, दिल्ली-52

कामधेनु है गाय

दीपक कुमार घोष

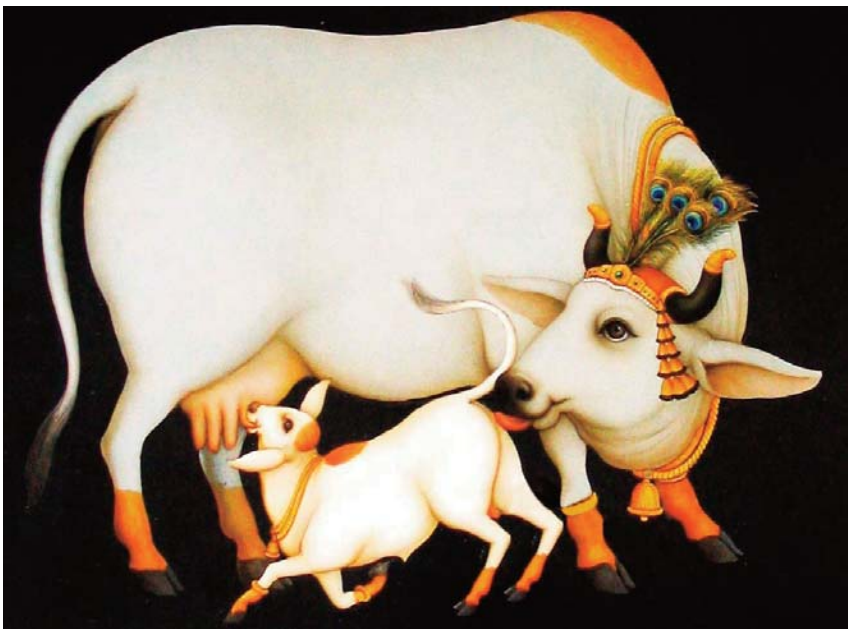

गाय के गोबर में 'श्री' का निवास होने के कारण गोमय से लिप्त हो जाने पर पृथ्वी पवित्र यज्ञभूमि बन जाती है और वहां से विघ्नकारी व तामसिक शक्तियों का प्रस्थान हो जाता है। गौमूत्र को गंगाजल के समान पवित्र माना गया है। अथर्ववेद का कहना है कि जो पाप किसी प्रायश्चित्त से दूर नहीं होते, उनका शमन गौसेवा और पंचगव्य के सेवन से हो जाता है।

वेदों में कहा गया है कि 'गौ रुद्रों की माता, वसुओं की पुत्री, अदीति-पुत्रों की बहिन और घृतरूप अमृत का खजाना है। गौ निरपराध एवं अवध्य है।'

'मातर: सर्वभूतानाम गाव:' के अनुसार गाय पृथ्वी के समस्त प्राणियों की माता है, बहुत कम लोग यह जानते होंगे कि 'गौ' भगवान सूर्य की प्रधान किरण का नाम है। सूर्यनारायण के उदित होने पर उनकी ज्योति, आयु और गौ तीनों किरणें ब्रह्मांड के समस्त प्राणियों में विभिन्न मात्रा में प्रवष्टि होकर उनमें चेतना का संचार रकती हैं। इन किरणों में से 'गौ' नामक पुष्टिवर्धक किरण केवल गौओं के द्वारा ही सर्वाधिक ग्रहण की जाती है और उसका घनीभूत सार हमें गौदुग्ध के माध्यम से सुलभ होता है। संभवत:, यह कारण ही इस महान प्राणी के गौ कहलाने का आधार है।

धर्मग्रंथ के मत से गौ और पृथ्वी में सद्गुणों की बाहुल्यता के कारण बड़ी साम्यता है। ये दोनों ही परस्पर एक-दूसरे की सहायिका और सहचरी हैं। मृत्युलोक की आधारशक्ति पृथ्वी है और देवलोक की आधारशक्ति गौ। पृथ्वी को इसी से भूलोक कहते हैं और भगवान श्रीकृष्ण के धाम को 'गोलोक'। भूलोक नीचे है और गोलोक उर्ध्वलोक होने से इससे ऊपर। ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृतिखण्ड में गोलोक के संबंध में कहा गया है कि- 'भगवान श्रीकृष्ण चतुर्भुजी विष्णु रूप में वैकुंठ में वास करते हैं और द्विभुज रूप में गोलोक में। वैकुंठ से पचास करोड़ योजन ऊपर 'गालोक धाम' विद्यमान है जो समस्त लोकों में श्रेष्ठतम है। वहां रासमंडल में गोओं, गोपा और गोपियों से घिरे हुए 'गोपाल' श्रीकृष्ण रासेश्वरी श्रीराधा के साथ निरंतर निवास करते हैं।'

गोसेवा और गो-पालन हेतु कटिबद्ध भगवान श्रीकृष्झा को प्राय: 'गोपाल' और 'गोविंद' नाम से पुकारा जाता है। उनके अपने दिव्यधाम का नाम भी 'गोलोक' होने से उनका गौ से नित्य संबंध प्रत्यक्ष सिद्ध होता है। शुक्ल यजुर्वेद के अनुसार यही गोलोक मानव-जीवन का परम लक्ष्य है। इसमें कहा गया है कि, 'मैं उस लोक में जाना चाहता हूं, जहां बड़ी-बड़ी सींगों वाली बहुत सी गौएं रहती हैं। जहां गौएं रहती हैं, वहां (श्रीकृष्ण रूपी) भगवान विष्णु का परम प्रकाश प्रकाशित रहता है।'

भविष्यपुराण के उत्तर पर्व में स्वयं भगवान श्रीकृष्ण धर्मावतार युधिष्ठिर को गौ की उत्पत्ति एवं उसके आध्यात्मिक रूप का उपदेश करते हुए कहते हैं- ''प्राचीनकाल में क्षीरसागर के मंथन से अमृत के साथ पांच गौएं उत्पन्न हुईं- नन्दा, सुभद्रा, सुरभि, सुशीला और बहुला। इन्हें लोकमाता भी कहा गया है। इनका आविर्भाव लोकोपकार तथा देवताओं की तृप्ति के लिए हुआ है। देवताओं ने अभीष्ट कामनाओं की पूर्ति करने वाली इन पांच गौओं को महर्षि जमदग्नि, भारद्वाज, वशिष्ठ, असित और गौतम ऋषि को प्रदान किया। गौओं के छ: अंग- गोमय (गोबर), गोरोचन, गोमूत्र, गोदुग्ध, दही और घृत अत्यंत पवित्र और संशुद्धि के साधन भी हैं। गोमय से शिवप्रिय श्रीमान बिल्ववृक्ष उत्पन्न हुआ, उसमें पद्महस्ता श्रीलक्ष्मीजी विद्यमान हैं, इसीलिए उसे 'श्रीवृक्ष' भी कहा जाता है। गोमय से ही कमल के बीच उत्पन्न हुए हैं। गोरोचन अतिशय मंगलमय, पवित्र और सर्वार्थ साधक है। गोमूत्र से गुग्गुल की उत्पत्ति हुई जो देखने में प्रिय और सुगंधिपूर्ण है। यह गुग्गुल सभी देवों का आहार है। संसार में जो कुछ भी मूलभूत बीज है, वे सभी गोदुग्ध से उत्पन्न हैं। प्रयोजन की सिद्धि मांगलिक पदार्थ दधि (दही) से उत्पन्न हुए हैं। गौघृत से अमृत उत्पन्न होता है जो देवों की तृप्ति का साधन है। गौओं के हृदय में हवि रहती है और गाय से ही यज्ञ प्रवृत्त होता है। गौओं में ही सभी देवगण प्रतिष्ठित हैं। गाय में ही छ: अंगों सहित संपूर्ण वेद समाहित हैं।' इस पुराण में गौर के जिस विराट आध्यात्मिक स्वरूप का वर्णन किया गया है, वह सभी लोगों के लिए विशेष रूप से पठनीय है।

महाभारत के अश्वमेधिक पर्व में गौ के सर्वदेवमय रूप का वर्णन मिलता है- 'गौ के शृंगों (सींगों) के मध्य में ब्रह्म, ललाट में शंकर, दोनों कानों में अश्विनीकुमार, नेत्रों में चंद्रमा और सूर्य तथा वक्ष में साध्य देवता, ग्रीवा में पार्वती,

पीठ में नक्षत्रगण, कुककुद (मौर) में लक्ष्मी तथा स्तनों में जल से परिपूर्ण चारों समुद्र निवास करते हैं।'

वाल्मीकीय रामायण के अनुसार जहां सुलक्षणा गौ होती है, वहां सभी प्रकार की समृद्धि, धन-धान्य एवं भौजय-पदार्थों की प्रचुरता होती है। धर्मशास्त्र का स्पष्ट अभिमत है कि गौएं लक्ष्मी का मूल हैं। उनमें पाप लेशमात्र भी नहीं हैं। गौएं ही मानव को अन्न और देवताओं को श्रेष्ठ हविष्य प्रदान करती हैं। गौओं का समुदाय जहां बैठकर निर्भयकतापूर्वक श्वास लेता है, वहां न केवल शोभा बढ़ती है वरन् वहां का सारा पाप नष्ट हो जाता है। तीर्थस्थलों में जाकर स्नान-दान से, ब्राह्मण-भोजन से, संपूर्ण व्रत-उपवास, तप, दान, आराधना, पृथ्वी-परिक्रमा, वेद-स्वाध्याय से तथा समस्त यज्ञों की दीक्षा ग्रहण करने से जो पुण्य पाया जाता है, वही पुण्य-लाभ गौ को हरी घास देने से मिल जाता है।

गाय के गोबर में 'श्री' का निवास होने के कारण गोमय से लिप्त हो जाने पर पृथ्वी पवित्र यज्ञभूमि बन जाती है और वहां से विघ्नकारी व तामसिक शक्तियों का प्रस्थान हो जाता है। गौमूत्र को गंगाजल के समान पवित्र माना गया है। अथर्ववेद का कहना है कि जो पाप किसी प्रायश्चित्त से दून नहीं होते, उनका शमन गौसेवा और पंचगव्य के सेवन से हो जाता है। पंचगव्य का निर्माण गाय के दूध, दही और घी में गोमय और गौमूत्र मिलाने से होता है। मंत्र-सिद्धि हेतु पुरश्चरण प्रारंभ करने से पूर्व पंचगव्य से काया-शुद्धि का विधान लगभग सभी तंत्र-ग्रंथों में मिलता है। पंचगव्य तन-मन, प्राण और आत्मा को शुद्ध करने की अद्भुत क्षमता रखता है। यंत्र-लेखन में प्रयुक्त होने वाले अष्टगंध में गोरोचन एक अनिवार्य अंग है। स्कन्दपुराण के नागरखंड में भगवान शंकर ने जिस प्रकार गोलोक स्थित माता सुरभि का स्तवन किया है, उस स्रोत की एक-एक पंक्ति गौ-महिमा को प्रकाशित करती है। पुराणों मं गौ-पूजन का महात्म्य विस्तार से वर्णित है।

शास्त्रों में गौ को सर्वदेवमयी और सर्वतीर्थमयी कहा गया है। गाय के दर्शन से समस्त देवों और तीर्थों के दर्शन का फल मिलता है। गौ-पूजा से अक्षय पुण्य प्राप्त तथा मनोरथ पूर्ण होता है। गौ-दान करने से मनुष्य सभी पापों से मुक्त होकर स्वर्ग के सुख का अधिकारी बनता है। गौ-पालन का जो आदर्श भगवान श्रीकृष्ण ने रखा है, आज उसी के अनुसरण की नितांत आवश्यकता है। पुरुषार्थ चतुष्टय- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष- सब कुछ प्रदान करने वाली गौमाता के समुचित पालन एवं रक्षा से भारत-भूमि पर स्थायी सुख-शांति स्थापित होगी तथा भारत श्रेष्ठतम राष्ट्र के रूप में विश्व में पुनः जगद्गुरु का स्थान प्राप्त करेगा। वस्तुतः, गौ साक्षात कामधेनु ही है। ■

भाग्य जगाएं फेंगशुई से

रामेश्वर प्रसाद

नकारात्मक ऊर्जा हटाता है समुद्री नमक

नमक का हमारे शरीर तथा वातावरण में काफी योगदान है। यह हमारी व्यक्तित्व ची तथा वातावरण की ची को प्रभावित करता है। समुद्री नमक नकारात्मक ऊर्जा को अपने भीतर समेट लेता है। 15 दिन में एक बार रात को सोते समय समुद्री नमक को घर में छिड़क दें। सुबह आप उसे झाड़ू से इकट्ठा करके घर से बाहर फेंक दें या बहते पानी में बहा दें। इसके अलावा आप महीने में एक-दो बार नमक के पानी का पोछा भी लगा सकते हैं।

बंद घड़ियों को घर में न रखें

घर के अंदर बंद घड़ियां नहीं होनी चाहिए क्योंकि वह नकारात्मक ऊर्जा उत्पन्न करती है। अगर किसी कारणवश आप उनको काम में नहीं ला रहे या बेचना नहीं चाहते तो आप उनको ठीक करा कर रखें। घर के अंदर पेंडलुम वाली घड़ी लगाकर आप सकारात्मक ऊर्जा को फैला सकते हैं।

रात को कपड़े बाहर न सुखाएं

पुराने जमाने में कहा जाता था कि रात को बाहर कपड़े सुखाने से वह रात को घूमती आत्माओं की ऊर्जा प्राप्त करते हैं और उन वस्त्रों को पहनना दुर्भाग्य का प्रतीक है। फेंगशुई मास्टरों ने इस पर अध्ययन किया और कपड़े रात को बाहर ना सुखाने का कारण बताया। उनके अनुसार कपड़े धूप से यांग ऊर्जा प्राप्त करते हैं जो कि हमारे शरीर तथा सौभाग्य के लिए अच्छी होती है।

संपत्ति के लिए रत्नों से भरा बर्तन

संपत्ति का सौभाग्य प्राप्त करने के लिए रत्नों से भरा बर्तन रखें। इसके लिए आप क्रिस्टल या चीनी मिट्टी का कटोरा लेकर उसमें तीन चीनी फेंगशुई के सिक्के लाल रिबन में बांध कर डालें उसके बाद उसमें तरह-तरह के रत्न जो कि आराम से मिल सकें उसमें रखें। इसके अलावा कटोरे में चावल के दाने तथा किसी अमीर के घर की मिट्टी उसमें डालें। संपत्ति कटोरे को दराज या अलमारी में छुपा कर रखना चाहिए।

चाकू-कैंची उपहार में न दें

चाकू तथा कैंची आदि के तीखे कोनों से शार ची (नकारात्मक ऊर्जा) उत्पन्न होती है। अतः इनको उपहार में देना शुभ नहीं माना जाता है। इससे संबंध खराब हो सकते हैं। चाकू तथा कैंची का कोना किसी की तरफ करने से या अपनी तरफ होने से व्यक्तिगत ची प्रभावित होती है। ऑफिस में काम करते वक्त अगर चाकू या कैंची मेज पर पड़ी हो तो यह नकारात्मक ऊर्जा पैदा करती है इसलिए इनको दरार के अंदर रखना चाहिए। घर के बैठक कक्ष में तलवार या चाकू लटकाना भी शुभ नहीं माना जाता है।

ऊँ घंटी तथा पवित्र कटोरा बजाएं

महीने में एक बार घर के अंदर नकारात्मक ऊर्जा को दूर करने तथा सकारात्मक ऊर्जा को फैलाने के लिए ऊँ घंटी या पवित्र कटोरा, जिसे कि सिंगिंग बाऊल भी कहते हैं, बजाएं। इसकी ध्वनि से पूरा घर सकरात्मक ऊर्जा से भर जाता है। यह कटोरा, सोने-चांदी एवं अन्य पांच धातुओं को मिलाकर बनता है जिसको कि लकड़ी की स्टिक से बजाया जाता है। इसको नियमित रूप से बजाने पर घर के सदस्यों में तालमेल बना रहता है।

लंबी आयु तथा स्वास्थ्य के लिए बांस

फेंगशुई के अनुसार सौभाग्य के लिए लंबी आयु का होना भी जरूरी है। बांस का पौधा लंबी आयु तथा अच्छे स्वास्थ्य का प्रतीक है। घर में बांस का पौधा बगीचे में लगाना या घर के अंदर बांस का चित्र टांगना या घर के मुख्य द्वार पर बांस का टुकड़ा टांगने से हम लंबी आयु के सौभाग्य को प्राप्त कर सकते हैं। अपने ऑफिस या दुकान के मुख्य द्वार के ऊपर बांस के दो टुकड़े 6 इंच या 9 इंच के लाल रिबन में बांध कर टांग सकते हैं। बांस के टुकड़े के दोनों सिरे खुले होने चाहिए। इससे व्यवसाय प्रतीकात्मक रूप में बांस के पौधे की भांति संकट काल में भी स्थिर रहेगा।

अवबोध

साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

नारी राष्ट्र का भविष्य विकास की क्रांति

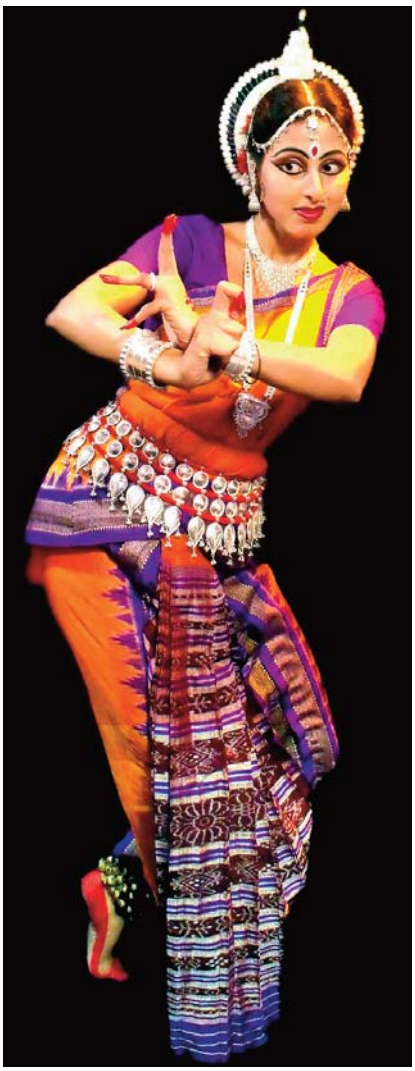

कहा जाता है कि आने वाली सदी महिलाओं की होगी। पर आज की स्थिति को देखते हुए एक बहुत बड़ा प्रश्न उभरता है कि क्या सचमुच महिलाएं प्रगति-पथ पर अग्रसर हैं? फैशन, नशा, अपराध, भ्रूणहत्या जैसी प्रवृत्तियों में तेजी से अग्रसर होती हुई महिलाएं अपने आपको प्रगतिशील मानती हैं। पर यह प्रगति तो उन्हें दुर्गति की ओर ही ढकेल रही है। क्या ऐसी पीढ़ी के हाथों में किसी समाज और राष्ट्र का भविष्य सौंपा जा सकता है? जो स्वयं दिग्भ्रांत है, वह समाज को कैसे दिशा देगी? जिसका स्वयं का भविष्य धुंधला है, वह राष्ट्र का भविष्य कैसे संवारेगी?

इसलिए अपेक्षित है कि इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करने से पूर्व वह अपने आपको संभाले। तथाकथित प्रगतिशीलता के भटकाव से मुक्त होकर सही प्रगति की राह पर आए। अपनी जीवनशैली को परिष्कृत करे। जीवनशैली में परिष्कार से तात्पर्य है कि वह अपने जीवन को चरित्रशील, सहनशील, स्नेहशील और श्रमशील बनाए। ऐसा करके ही वह अपने दायित्व को सम्यक् प्रकार से निभा सकती है। समाज को सही दिशा दे सकती है। राष्ट्र के भविष्य को संवार सकती है।''

सुप्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखिका सीमोन द वाउआर ने लिखा है–स्त्री पैदा नहीं होती, उसे बनाया जाता है। यह तथ्य सुनने में अटपटा लग सकता है। पर यथार्थ से परे नहीं है। विज्ञान की भाषा में हर स्त्री 50 प्रतिशत पुरुष होती है और हर पुरुष 50 प्रतिशत स्त्री। पर यह आश्चर्य है कि स्त्री को मात्र स्त्री माना जाता है और पुरुष को मात्र पुरुष। स्त्री को अबला मानकर उसकी सदा से उपेक्षा होती रही। शोषण होता रहा। अन्याय की विष-घूंट पिलाई जाती रही। इससे उसका व्यक्तित्व दबता चला गया। शक्तियां कुंठित होती चली गई। अपेक्षा है, उसके प्रति पक्षपातपूर्ण व्यवहार बंद हो। उसके अधिकार उसे सौंपे जाएं। उसे आगे बढ़ने के लिए खुला मैदान मिले। यह न केवल उसके हित में होगा, अपितु उससे भी अधिक समाज के हित में होगा। समाज की विकास गति में एक क्रांति घटित होगी।

आस्तिक जगत में मृत्यु के उपरांत मिलने वाले स्वर्ग और नरक की चर्चा बहुत व्यापक स्तर पर प्राप्त है। पर महिला एक ऐसी शक्ति है, जो इस जीवन में भी घर को स्वर्ग और नरक बना सकती है। वस्तुतः स्वर्ग और नरक का बहुत गहरा संबंध व्यक्ति के आचार एवं विचार से है। जिस घर के सदस्यों का आचार पवित्र है, विचार ऊंचे हैं, वह अपने आप में स्वर्ग है। इसके विपरीत जहां आचार मलिन है, विचार कलुषित हैं, वहां नरक है। घर के सदस्यों में पवित्र आचार और उच्च विचार, सत्संस्कारों का वपन करने का कार्य मुख्य रूप से नारी करती है। जो नारी इस दृष्टि से सजग होती है, वह सचमुच ही अपने घर को स्वर्ग बना सकती है। पर दुर्भाग्य से नारी ने अपनी इस अर्हता को पहचाना नहीं है। इसका एक बहुत बड़ा कारण है–अशिक्षा। यदि अशिक्षा का राहु दूर हो जाए तो जीवन का सौभाग्य-सूरज अपनी पूरी प्रभा के साथ चमक उठेगा।

विवेक जीवन के विकास का मूल आधार है, विकास का महामंत्र है। इसके अभाव में व्यक्ति बहुत कुछ पाकर भी रीता रह जाता है। अच्छी-से-अच्छी वस्तु का अपेक्षित लाभ नहीं उठा पाता। इस महामंत्र को साधने वाले के लिए विकास के विभिन्न द्वार स्वयं उद्घाटित हो जाते हैं। नारी इस महामंत्र की आराधना कर अपने विकास का आधार खोज सकती है। फिर आग्रह, रूढ़ि, अंधानुकरण जैसे जीवन-विकास के बाधक तत्वों से सहज छुटकारा हो सकता है। ■

अनस्तेशियस की व्यावहारिकता

इजिप्ट के विचारक अनस्तेशियस के आश्रम में किताबों का बड़ा संग्रह था। उस संग्रह में कई दुर्लभ और मूल्यवान ग्रंथ थे। एक बार उसके आश्रम में आये एक संन्यासी ने लौटते समय एक अमूल्य ग्रंथ चुरा लिया। उसी दिन उसके बारे में अनस्तेशियस को पता चल गया कि किसने वह ग्रंथ चुराया है। अनस्तेशियस चाहते तो तुरंत अपने शिष्यों को उसके पीछे भेज सकते थे, लेकिन उन्हें डर था कि संन्यासी इस पर झूठ बोलने का एक पाप और कर सकता है। इसलिए, उन्होंने कुछ नहीं किया।

कुछ दिनों बाद एक अमीर आदमी वही ग्रंथ लेकर उनके आश्रम पर पहुंचा। उसने उस ग्रंथ की कीमत पूछी और कहा– ''मुझे दुर्लभ ग्रंथ इकट्ठे करने का शौक है। आप जानकार हैं। एक संन्यासी इस ग्रंथ के लिए काफी मोटी रकम मांग रहा है।''

अनस्तेशियन ने कहा– ''किताब सचमुच बहुमूल्य है।''

लौटकर अमीर आदमी ने संन्यासी से कहा कि तुम्हारी मांगी कीमत पर मैं ग्रंथ खरीदने के लिए तैयार हूं। फिर, उसने बातों-बातों में किताब के बारे में अनस्तेशियस से सलाह की जाने की बात भी बतायी। संन्यासी दंग रह गया। आज तक उसकी भलाई के बारे में किसी ने इतना सोचा नहीं था और न ही किसी ने उसके साथ इतना प्यार भरा व्यवहार किया था। उसने अमीर आदमी के दुगनी कीमत देने के लालच को ठुकरा कर ग्रंथ को वापस ले लिया। फिर, वह सीधे अनस्तेशियस के आश्रम पर पहुंचा। उसकी आंखों में आंसू भरे थे। उसने ग्रंथ लौटाया तो अनस्तेशियस ने कहा– ''रख लो। तुम्हें शायद इसकी ज्यादा जरूरत है।''

तब संन्यासी ने कहा– ''मैं यह ग्रंथ लौटाना चाहता हूं और यहीं रह कर अपने ज्ञान की प्राप्ति करना चाहता हूं।'' उसकी इच्छा अनस्तेशियस ने मान ली। अनस्तेशियस के समझदार बर्ताव और प्रेमपूर्ण व्यवहार से संन्यासी का जीवन सुधर गया।

–प्रस्तुतिः विपिन जैन, लुधियाना

उत्थान

आचार्य सुदर्शन

अपनी मर्जी के मालिक बनो

एक यात्रा के क्रम में भगवान बुद्ध एक बार किसी गांव की ओर निकले। वहां किसी व्यक्ति ने उन्हें काफी अपमानजनक शब्दों में कुछ कहा, लेकिन बुद्ध चुपचाप खड़े होकर उसकी बातों को सुनते रहे। जब उसकी बातें समाप्त हो गई, तो वह उस व्यक्ति से इजाजत लेकर वहां से चलने लगे। जब उस व्यक्ति ने उन्हें रोकते हुए कहा कि ''मैंने आपको इतनी खरी-खोटी सुनाई, पर आप कुछ नहीं बोले, आप भी तो कुछ बोलें।''

भगवान बुद्ध ने कहा कि ''मुझे कुछ नहीं कहना है। आपने जो कहा, वह आपकी मर्जी थी और मुझे चुप रहना है, यह मेरी मर्जी है।'' कोई व्यक्ति जब आपके पास आकर कुछ कहना चाहे या कहे तो यह आपका फर्ज बनता है कि आप उसकी बातों को एकाग्रता से सुनें, ताकि आपके बारे में उसे यह अहसास हो कि आप उसकी बातों को समझ रहे हैं। जब वह अपनी बात समाप्त कर ले, तब आवश्यकतानुसार आप उसे जवाब दें। सफल बातचीत के लिए यह जरूरी है, कि वह जब तक बोलता रहे, आप शांत भाव से उसकी बातों को सुनते रहें। फिर जब आपके बोलने की बारी आए तो उस व्यक्ति को चुपचाप, शांत होकर आपकी बातों को सुनना चाहिए। दरअसल, दो व्यक्तियों के बीच बातचीत करने के भी कुछ तरीके होते हैं।

पहला तो यह कि आपस में जोर-जोर से चिल्लाकर बातें न करें। जब आप बात कर रहे हों तब आपके चेहरे पर मुस्कुराहट होनी चाहिए। बीच-बीच में अपनी नाक में उंगली डालना, अपने कान, बाल आदि खुजलाना, शरीर को हिलाते रहना, जम्हाई लेना या कोई अन्य कार्य करना तथा अशोभनीय हरकत करने जैसे कार्य अशिष्टता भरे व्यवहार माने जाते हैं। इन पर आवश्यक रूप से ध्यान देने की जरूरत है। ऐसी भूल कदापि नहीं करनी चाहिए, क्योंकि जो व्यक्ति ऐसी भूल करते हैं, उनके मित्रों की संख्या धीरे-धीरे घटती चली जाती है। यदि आपको तर्क करना हो या आप उनकी बातों से असहमत हों तो पहले उनकी बातें पूरी हो जाने दें। उसके बाद बड़े ही शिष्टभाव से उपयुक्त शब्दों में उन्हें समझाएं कि आपने उनकी किन बातों को सही नहीं समझा या आप उनकी किन बातों से सहमत नहीं हैं और उस तथ्य पर आपके विचार क्या हैं?

आपको हमेशा इन बातों का ख्याल रखना चाहिए कि आपके मुंह से भी कभी दूसरों का अपमान हो सकता है, तब आप भी एक अभद्र व्यक्ति की गिनती में आ जायेंगे, जबकि आप एक विवेकशील व्यक्ति हैं। यदि सामने वाले ने कोई भूल कर दी, तो आप भी उस हरकत को क्यों दोहराना चाहते हैं? यदि आपके पास योग्यता है, तो शब्दों की भूल को शब्दों से ही सुधारें। आप ध्यान दें कि जब कोई व्यक्ति बार-बार अपने उत्तेजक शब्दों से आप पर प्रहार कर रहा हो और आप प्यार व मुस्कुराहट से उसकी हर बातों को बिना जवाब देते हुए हंसकर झेल जाते हैं, तो वह व्यक्ति यह आशा जरूर करेगा कि जिन कड़े शब्दों का प्रयोग मैंने इस व्यक्ति के लिए किया, यह भी उसी रूप में उत्तर देगा, पर जवाब न देने पर वह व्यक्ति बहुत ही विचलित हो जाएगा। ■

सुखी परिवार अभियान के प्रणेता,
आदिवासी जन-जीवन के मसीहा एवं अहिंसा के प्रेरक
गणि राजेन्द्र विजयजी म.सा. के प्रथम वर्षीतप पारणा
एवं
मुनिश्री रश्मेन्द्र विजयजी म. के 14वें वर्षीतप पारणा
के अवसर पर आप सभी सादर आमंत्रित हैं

सान्निध्य साहित्य मनीषी आचार्य श्रीमद् विजय वीरेन्द्रसूरीजी म.सा.

दिनांक: 23–24 अप्रैल 2012

स्थान: सुखी परिवार एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय
छेदी वासन रोड, पो. कवांट, जिला–वडोदरा (गुजरात)

:: निवेदक ::

अशोक कोठारी (अध्यक्ष) | दिनेश मेहता (मंत्री) | ईश्वरभाई राठवा (अध्यक्ष-गुजरात प्रांत) | विजयभाई राठवा (मंत्री-गुजरात प्रांत)

सुखी परिवार फाउंडेशन

संपर्क सूत्र: 09586981101, 09825741631

कविताएं

सृष्टि की नीति

डॉ. जगतीन्द्र प्रसाद सक्सेना

जो कल था वह आज न है।
जो आज है वह कल न होगा।
यह है सृष्टि की रीति निराली।
यह रीति नहीं है बदलने वाली।
धरती धुरा पर घूमती रहेगी।
सुबह दोपहर शाम होते रहेंगे
दिन में काम–काज करने के लिए।
रात्रि भी आती जाती रहेगी
सोने, गाने, जश्न मनाने के लिए।
सूरज पूरब में निकलता ही रहेगा
सृष्टि में सूर्य किरण तथा
पृथ्वी पर ऊर्जा पफैलाने के लिए,
रात्रि के स्वागत में
पश्चिम में डूब जाने के लिए।
यही जीवन है। यही धर्म है।
यही है सृष्टि की नीति।

–एफ.–601, पवित्रा अपार्टमेंट
वसुन्धरा एन्क्लेव,
दिल्ली–110096

चलो गांव की ओर

अकेलाभाई

गांव भी शहर बन सकता है
अगर तुम चलो गांव की ओर।
जब तुम भाग कर आए थे
इस गांव को शहर बनाए थे।
पानी–बिजली–सड़क
सब तुम बनाए थे।
इस वीरान जगह को
तुमने आबाद किया
अब तुम्हारी जरूरत
उस गांव को है
जहां न पानी है, न बिजली
न सड़क है, न कुशल कर्मी
पर है, वहां–
खूब उपजाऊं धरती
लहलहाएगी हरी–भरी धरती
चारो ओर
अगर तुम
चलो गांव की ओर।

–रेडियो कॉलोनी, पो. रिन्जा
शिलांग–793006
(मेघालय)

बेटी

सरिता गुप्ता

महका आंगन चहका द्वार, घर में नन्ही कली खिली
मुझको तो लगता है जैसे सारे जग की खुशी मिली
बिन कलियों के उपवन सोना, बिन बेटी के अंगना न हो
झगड़ा भाई–बहन का सूना लगता न अंगना
भाई को राखी बंधती, न माथे टीका साजे
मुझको तो बेटी सारी जग की रौनक लागे।
न हो कन्यादान अगर तो पिता ऋणी ही रहते
कन्यादान है सबसे ऊंचा, ऐसा साधु कहते
बेटी है जीवन की खुशियां, दो–दो आंगन महकाएं
पिता घर में बने लाड़ली, ससुर घर लक्ष्मी कहलाए।

–764–सी, एल.आई.जी. फ्लैट ईस्ट ऑफ
लोनी रोड, शाहदरा, दिल्ली–110093

बेजान सवेरे

पूनम गुजरानी

धूंध की कैद में
सवेरे हैं बेजान
दर्प ढ़ोता आदमी
खो रहा पहचान।
रिक्तता हर पृष्ठ पर है
हाशियें पर अर्थ सारे
आंख में पानी नहीं है
स्वप्न सारे है कुंवारे
द्वार पर सांकल बजाता
सो गया मेहमान।
आकांक्षाओं के गणित में
टूकड़ा–टूकड़ा जिन्दगी
सुप्त सूरज, बंद घड़ियां
घूटती सांसे थकी–थकी
जानते सारे जगत को
स्वयं से अनजान।
मन के तहखानों में गूंजे
तकलीपफों का राग
छदम् देश में करे छलावे
शीशमहल की आग
चिड़िया चुप, विरान बस्ती
आबाद है शमशान।

9–ए, मेघ सरमन
अपार्टमेंट–1
तेरापंथ भवन रोड, सिटी
लाईट, सूरत

आत्म साक्षात्कार

राजेन्द्र वर्मा

जय–पराजय से विरत हो
काल से दो–चार कर ले।
आत्म का सत्कार कर ले।।

आत्म है तो अस्मिता है,
अस्मिता अपराजिता है,
यह परीक्षा की घड़ी है,
स्वार्थ का प्रतिकार कर ले।
आत्म का सत्कार कर ले।।

भूख खा ले, प्यास पी ले,
पुण्यता में किन्तु जी ले,
श्रेष्ठता से हो विभूषित
स्वत्व का सिंगार कर ले।
आत्म का सत्कार कर ले।।

यह जगत मिथ्या भले हो
सत्य की हत्या भले हो,
सत्य की प्रतिमूर्ति बनकर
ईश को साकार कर ले।
आत्म का सत्कार कर ले।।

–3/29, विकास नगर
लखनऊ–226022 (उ.प्र.)

मां: एक मधुर अहसास

डॉ. प्रीत अरोड़ा

मैं अकेली कहां?
कोई तो है
जो मुझे पग–पग पर समझाती है,
कभी प्यार से
कभी पफटकार से,
निराशा के घनघोर अंधकार में,
ज्योति की एक सुनहरी किरण,
रास्ता दिखाती
पथ प्रदर्शन करती
मुस्कराती
ओझल हो जाती,
पास न होकर भी
दिल के कितने करीब होती है
जब–जब भी तुम्हें पुकारा
तो पाया
एक मधुर अहसास,
सुख–स्पंदन
प्यार का अथाह सागर,
निश्छल प्यार
जो कहती...मैं दूर कहां हूं तुमसे?
तुम मेरे प्रतिबिम्ब हो,
उठो, छोड़ो निराशा
और आगे बढ़ो...
मेरी प्रेरणा, मेरी मार्ग–दर्शक
और कोई नहीं
मेरी मां ही हैं।

–मकान नं. 405, गुरुद्वारा के
पीछे, दशमेश नगर, खरार
जिला–मोहाली–140301
(पंजाब)

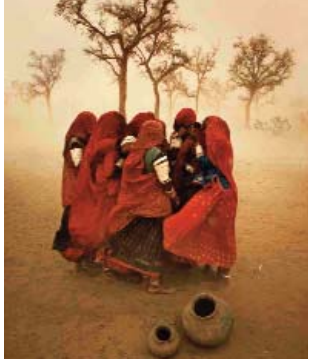

आज होली है

प्रो. योगेश चन्द्र शर्मा

रंग छन गये
चंग जम गये
भंग घुट गई
हुड़दंग हो गये
कि आज होली है।
पिचकारी ली किसी नवेली ने
रंग डाला किन्हीं रंगीलों को
झूम उठी कहीं कामना
चढ़ गया रंग दीवानों को।
मस्ती जागी
यौवन जागा
साजन मनभावन जागे
जन मन सरसाया
कि आज होली है।
और उस तरपफ अंधेरे में
दुबका कोने में
अनजाना, अनबोला
अनखाया छः दिन का
एक निरीह इंसान।
नजर पड़ी हुड़दंगी की
होली के दीवानों की
उस सूखी भूखी
बदरंगी काया पर।
डाल दिया रंग
कीचड़ उछाल दिया
कुछ पत्थरों को भी
फूल सा बखेर दिया
कि आज होली है।
होली मतवालों की है
भरे पेट वालों की है
महलों की पूंजी वालों की है
सुख सागर में रहने वालों की है।
जो भूखे हैं, नंगे हैं
मजदूर जिंदगी के हैं
मजबूर सांस के वाहक हैं
शून्य दिलों के खोखे हैं
क्या होली, उसकी होली
सूने दिल में खामोशी
क्या उनसे खेलें
क्या उन्हें कहें
कि आज होली है।

–10/611, मानसरोवर,
जयपुर–302020 (राजस्थान)

आदमी

शम्भु चौधरी

आदमी को आदमी, खा रहा आदमी।
उम्र पाकर भी मर रहा है आदमी,
आंख का अंधा रहा हो,
पांव का लंगड़ा भले हो,
मस्तिष्क में भले ही
शून्य ने ले रखी जगह हो,
पर हर तरपफ ही, हर तरपफ–
सिपर्फ छा रहा है आदमी
छिन कर सुख–चैन सबकी–
सो रहा खुद है आदमी
घर–घर में बूढ़े मां–बाप
खोज रहे हैं आदमी
गांव का मरता किसान
खोज रहे हैं आदमी
संसद में तड़पता लोकतंत्रा
खोज रहे हैं आदमी
मां की कोख में भी अब
खोज रहे हैं आदमी
हर तरपफ बस एक ही बात
खोज रहे हैं आदमी।

–एफ.डी.–453/2, साल्टलेक सिटी
कोलकाता–700106

गज़ल

रश्मि बरनवाल 'कृति'

बदला वक्त माँ! छोड़ो भी चिंता,
मैं बिटिया हूं, परेशानी नहीं हूं।
मुझे आता है नंगे पांव चलना,
मैं महलों की महारानी नहीं हूं।
है अच्छा क्या, बुरा क्या जिंदगी में,
मुझे है होश दिवानी नहीं हूं।
क्यूं जाते हो यूं, नजरें चुरा कर,
मैं इतनी भी तो बेगानी नहीं हूं।
तुम बैठे हो क्यों पत्थर मारने को,
मैं ठहरा हुआ पानी नहीं हूं।
मुझे मिलकर रहेगी मेरी मंजिल,
राहों से अपनी अंजानी नहीं हूं।
मेरी कविता में तुमको मैं मिलूंगी,
मैं सच हूं, झूठी कहानी नहीं हूं।
अंधेरा कब तलक घेरेगा मुझको
हां! 'रश्मि' हूं मैं बेमानी नहीं हूं।

–द्वारा अमर सिंह गोधारा
आर. जेड.–147, कमरा सं. 8
कटवारिया सराय, नई
दिल्ली–110016

गवाह है

ओमप्रकाश अडिग

मेरे पास कुछ भी नहीं था
कुछ भी नहीं है
और कुछ भी नहीं होगा।
मैं कितना महान हूं
दावे करने वाले लोग
और लम्बे अभियोग
बहुत छोटे लगते हैं।
सिद्धांत और तर्क
अगर खुल कर आ जाएं
तो क्या होगा
जब हर कोई त्रास्त है
और त्रास्ता में व्यक्त है
तो स्वस्थ कैसे कहा जा सकता है।
घटनाएं करती है परिक्रमाएं
और मैं सब कुछ खो देता हूं
मैंने सारा बाह्य समेट लिया है
और सारा अंतर
बिखेर दिया है दुनिया के सामने।
एक एक अक्षर
एक एक शब्द
एक एक पंक्ति
और एक एक गीत
इसका गवाह है।

–गीतायन, 454, रोशनगंज
शाहजहांपुर–242001 (उ.प्र.)

खामोशी

बृजेश कुमार त्यागी

खामोशी भी बोलती है
शब्दों की तरह
सटीक होती है
इसकी भाषा खरी
व्याख्याओं से भरी
विभ्रम से दूर
हकीकत की हदों को छूती
बस कह जाती है
अपनी बात, चुपके से
ज्यों प्रेयसी का मौन निमंत्रण
अपने प्रियतम को
खामोशी, सिर्फ खामोशी नहीं
एक सिलसिला है भावों का
बहता अविरल निर्झर–सा
खामोश पाषाण के सीने पर
चिर–निरंतर।

–सहायक निदेशक
230 संपादन हिन्दी अनुभाग
राज्यसभा सचिवालय,
संसदीय सौंध,
नई दिल्ली

प्रदूषण

डॉ. दादूराम शर्मा

खा–पी जिसका अन्न–जल हुए मनुज तुम पुष्ट।
क्यों उस धात्री धरा पर हुए अकारण रुष्ट? ।।1।।
घाव बनाते धरा के उर पर कर विस्पफोट।
प्राणिवर्ग व स्वयं के यह अस्तित्व पर चोट।।2।।
करें वायु–ध्वनि–प्रदूषण ये कल–वाहन–यंत्रा।
उलट दिया विज्ञान ने सहज प्र ति का तंत्रा।।3।।
लील रहा है शांति को कान पफोड़ता शोर।
समर–साधनों के दनुज करें भयंकर रोर।।4।।

–महाराजा बाग, भैरोगंज
सिवनी–480661 (म.प्र.)

नरेश चन्द्र तिवारी

पवित्र वनस्पति है कुंकुम

केसर का सदियों से इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। केसर चारु अर्थात सुंदर, सौरभ अर्थात सुवासित मंगलया अर्थात शुभ जैसी उपाधियों से विभूषित है। केसर को भारतीय संस्कृति में काफी महिमामंडित किया गया है।

पवित्र वनस्पति है- कुंकुम अर्थात् केसर। इसे भारतीय समाज में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। देवी-देवताओं की पूजन-सामग्री में इसे सम्मिलित किया जाता है। सौभाग्यवती हिन्दू-स्त्रियां इसका प्रयोग विशेष रूप से करती हैं। प्राचीनकाल से ही माथे पर बिंदी लगाना स्त्रीत्व तथा सौभाग्य का प्रतीक माना जाता रहा है। पूर्वकाल में बिंदी के लिए कुंकुम या सिंदूर उपयोग में लाया जाता था।

धार्मिक उत्सवों व मंदिरों में इसका उपयोग पूजन सामग्री में भी प्राचीनकाल से होता आ रहा है। हिन्दू-परिवारों में धार्मिक अनुष्ठान हो या कोई मांगलिक प्रसंग, सुहागिन का कुंकुम हो या इष्टदेव की रोल- प्रत्येक शुभ अवसर पर कुंकुम की अनिवार्यता बनी रहती है। हमारे देश में पीले वर्ण को शुभ माना जाता है। अत:, पीतवर्ण या केसरिया रंग का धार्मिक उत्सवों एवं अनुष्ठानों में विशेष महत्व है। सौम्य देवी-देवताओं के वस्त्रों को केसरिया रंग में रंगने की पुरानी परम्परा है। मंत्रों को लिखने के लिए भी कुंकुम या कुंकुम मिलाकर तैयार की गयी विशिष्ट स्याही का उपयोग किया जाता है।

व्रतादि में पंचगव्य आदि के समान यक्षकर्दम का भी उपयोग होता है। यह दो प्रकार से बनता है। पहली विधि में केसर, अगरु, कस्तूरी और कंकोल को समान भाग में लेकर यक्षकर्दम बनाया जाता है। दूसरी विधि में दो भाग कस्तूरी, तीन भाग चंदन और एक भाग हरिद्रा लेकर बनाया जाता है।

कुंकुम से भारतवासी शताब्दियों से परिचित हैं। पौराणिक ग्रंथों के साथ-साथ संस्कृत साहित्य में भी कुंकुम का उल्लेख मिलता है। प्राचीनकाल में कुंकुम का उपयोग वस्त्र-रंजन तथा सौंदर्य-निखार के लिए किया जाता था। वाल्मीकि-रामायण से पता चलता है कि तत्कालीन समाज में स्त्रियां शृंगार के लिए चंदन, अगरु और कैलेयक (कुंकुम) का प्रयोग करती थीं। केसर और अगरु की सुगंध से गलियां महकती रहती थीं। कालिदास के ऋतुसंहार से पता चलता है कि तत्कालीन समाज में केसर की पत्तियों एवं विभिन्न प्रकार के पुष्पों को लगाने की प्रथा थी। केसर के फूलों के करधनी भी बनती थी।

भर्तृहरि के शृंगारशतक में भी इस बात का उल्लेख आया है कि स्त्रियां अपने शरीर पर चंदन और केसर का उबटन लगाती थी। वराहमिहिर ने वृहत्संहिता में लिखा है कि लोग सुवासित तेल बनाने के लिए केसर, चंपा, कमल तथा गुलाब को तिल के तेल में डालकर धूप में पकाते थे। गीतगोविंद में इस बात का उल्लेख है कि श्रीकृष्ण ने राधा को केसर के फूलों से सजे सेज पर प्रेमलीला के लिए आमंत्रित किया था।

केसर का सदियों से इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। केसर चारु अर्थात सुंदर, सौरभ अर्थात सुवासित मंगलया अर्थात शुभ जैसी उपाधियों से विभूषित है। केसर को भारतीय संस्कृति में काफी महिमामंडित किया गया है।

विश्व के दूसरे देशों में भी केसर आकर्षण का केन्द्र रहा है। फारसी में केसर को जर्द कहा गया है। जर्द की उत्पत्ति जैंड से हुई है जिसका अर्थ होता है पीला या सुनहरे रंग का और जर्दा-ए-कामरान का अर्थ है सौभाग्यशाली पीला। विश्व प्रसिद्ध सोलोमन का गीत के रचयिता ने भी इसका उल्लेख किया है। ग्रीक में सुबह की देवी इओस ने केसरिया रंग के वस्त्र धारण कर रखे हैं।

केसर का प्रेम और उत्तेजना से भी गहरा संबंध है। शायद यही कारण है कि वैवाहिक रस्मों एवं रिवाजों और पति-पत्नी के निजी संबंधों में केसर की महत्वपूर्ण भूमिका मानी गयी है। इलियड में इस बात का वर्णन है कि जूनो नामक प्रेमिका अपने प्रेमी जोव को उत्तेजित और आकर्षित करने के लिए केसर और जलकुंभी में बिछावन तैयार करती है।

ईरान में केसर को जादुई गुणों से परिपूर्ण माना गया है। हाजी जैनेल अत्तर ने 1368 में केसर की प्रशंसा करते हुए इसे जादू-ए-दिहकन कहा। गर्भवती महिलाएं अखरोट के आकार की केसर की गेंद बनाकर पेट के निचले हिस्से में बांध लेती थीं ताकि शिशु का जन्म आसानी से हो सके और प्रसवकाल के दौरान किसी तरह की समस्या न खड़ी हो।

अरबी कथाकार इस्ताखरी के अनुसार फारस के दारबंद और इस्पाहन इलाकों में केसर की खेती 10वीं शताब्दी के मध्य शुरू हो चुकी थी। वहां केसर मिलाये चावल का रिवाज शुरू हो चुका था। चीनी इतिहासकारों के अनुसार यू एन शासन (1280-1368) के दौरान खाने में सा-फा-लाण (केसर) मिलाने की परम्परा शुरू हो चुकी थी। शिहां के लेखक अलू जौहरी ने केसर को जाफरान नाम दिया। यह 10वीं शताब्दी की बात है।

जर्मनी और स्वीटजरलैंड में पावन अवसरों पर बनाये जाने वाले खास तरह के केक में केसर मिलाया जाता है। पुराने जमाने में केसर को कितना महत्व दिया जाता था, यह इस एक तथ्य से साबित हो जाता है कि केसर में मिलावट करने वालों को मृत्युदंड तक दिया जाता था।

रोम में केसर को भोजन में खास जगह दी गयी थी। इसके अतिरिक्त वहां केसर से खास तरह का इत्र तैयार किया जाता था जिसे शाही घराने के लोग काम में लाते थे। यह इत्र केसर, पानी और शराब से तैयार किया जाता था।

स्पेन में 10वीं शताब्दी के दौरान केसर की पारम्परिक खेती शुरू हो चुकी थी। ऐसा वहां का पुरातत्व विभाग पुरानी दस्तावेजों के आधार पर दावा करता है।

केसर इरीडेसी कुल का लगभग 45 से.मी. लंबा बहुवर्षीय शाकीय तथा कंदीय पौधा है। इसमें प्याज के समान भूमि के नीचे कंद होता है। अक्टूबर-नवम्बर में इसमें बैंगनी रंग के फूल खिलते हैं। इन फूलों के सूखे हुए अग्रभाग कुक्षि को केसर कहते हैं। प्रत्येक पुष्प में तीन कुक्षियां होती हैं। कुंकुम काफी महंगा है, अत: इसमें व्यापक पैमाने पर मिलावट की जाती है या नकली केसर बेचा जाता है। भारत में स्पेन से केसर का आयात होता है। ■

महिमा

शुभदा पांडेय

प्रेममयी मीरा

मीरा को शब्दों में नहीं बांधा जा सकता, उनके पदों में लीन हुआ जा सकता है, जैसे द्वारिकाधीश हो गए।

विवेकानंद ने कहा है- ''वस्तुत: भक्तियोग उच्चतर प्रेम का विज्ञान है। वह हमें प्रेम की दिशा को निर्दिष्ट करना और उसको संयमित करना सिखाता है। यह हमें इसको प्रयोग करने की, इसको नया उद्देश्य देने की सीख देता है। यह हमें यही सिखाता है कि प्रेम में हम सर्वोच्च व अत्यंत श्रेयस्कर पद कैसे प्राप्त कर सकते हैं। अर्थात किस प्रकार यह हमें आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति की ओर प्रवृत्त कर सकता है।''

मीरा इसी आनंद का नाम है, जिसने कुछ इस लहजे में श्रीकृष्ण की आराधना की कि लोग इसे 'प्रेम' की संज्ञा दे बैठे।

प्रेम शब्द को कबीर ने ढाई आखर में नापा, किन्तु इसका प्रभाव इतना व्यापक है कि समग्र जीवन का अर्थ निहित होता है। यही वह मूल तत्व है जिसकी खोज संत से लेकर दुष्ट तक को होती है। जिन लोगों ने परमात्मा को व्यक्तिगत अनुभवों से जाना है, उनका कहना है कि परमात्मा की जीवात्मा लालसा, जीवात्मा की परमात्मा लालसा से कहीं अधिक गहरी होती है।

सूफी संत जलालुद्दीन रूमी कहते हैं जब इस हृदय में प्रेम की ज्वलंत चिंगारी उठती है, निश्चय समझो, वह प्रेम उस हृदय में भी प्रतिबिम्बित हो रहा है। जब परमात्मा के लिए तुम्हारे हृदय में प्रेम उमड़ता है, निस्संदेह भगवान भी तुम्हें प्रेम करते हैं।

कृष्ण भक्तिधारा में नया आयाम बुनने वाली मीरा का जन्म 1503 ई. में रतन सिंह की पुत्री के रूप में एक क्षत्रिय परिवार में राजस्थान के कुड़की गांव में हुआ था। मीरा बचपन से ही भक्तिमार्गी थी, साधु-संतों की संगति ने इसमें चार

मीरा ने कुछ इस लहजे में श्रीकृष्ण की आराधना की कि लोग उसे 'प्रेम' की संज्ञा दे बैठे।

चांद लगाया। वे कृष्ण को अपना पति मानती और भजनों की रचना करती थी। एक विशेष पड़ाव उसके जीवन में तब आया, जब 1516 ई. में उनके पिता ने उनका विवाह मेवाड़ के राजा महाराणा सांगा के पुत्र राजकुमार भोजराज के साथ कर दिया।

मीरा का सतोगुण इस राजसी परिवेश में द्वंद्व करता रहा, पर पराजित नहीं हुआ-

लोग कुटुम्बी बरजि बरजहीं,
बतियां कहत बनार्य
चंचल, निपट, अटक नहिं मानत,
पर हथ गए बिकाय।
भली कहौं कोई बुरी कहौ मैं,
सब लई सीस चढ़ाय।
मीरा प्रभु गिरिधर लाल बिन,
पल भरि रह्यों न जाए।

बचपन में मातृ-पितृ सुख विहीना मीरा 1523 ई. में पति विहीना भी हो गई। अपने मन को शांति प्रदान करने के लिए वे रैदास संत की शरण में गई। मीरा की भक्ति पर राजघराने के अंकुश लगते रहे, उनके अलौकिक प्रेम की लौकिक पड़ताल होती रही। मीरा अपनी धुन में मगन रहीं-

जब ते मोहि नन्दनन्दन दृष्टि पड्यो माई।
तब से परलोक, लोक कछू ना सोहाई।

मीरा एक नदी थी। पड़ा और तीर्थ उनकी मंजिल नहीं थी, वे तो उस सागर की तलाश में थी। जिसे वे मन में बसाये हुए थी। मीरा का क्रांतिकारी मन राज-निष्कासन के आदेश पर उनकी वरीयता ठुकराते हुए लिखता है-

सिसौद्यो रूठ्यो तो म्हांरो काई कर लेसी
म्हे तो गुण गोविन्द का गास्था हो माई
राणा जी रूठायो वॉरो देस रखासी
हरि रूठ्या कुम्हलास्थां हो माई।

वे जहां-जहां गई, तीर्थ बनाती गई। संतों का मिलना-जुलना बना रहता। मीरा को शब्दों में नहीं बांधा जा सकता, उनके पदों में लीन हुआ जा सकता है, जैसे द्वारिकाधीश हो गए।

प्रेम की इसी व्याख्या को समझाते हुए महर्षि याज्ञवलक्य अपनी पत्नी मैत्रेयी को उपदेश देते

हुए कहते हैं कि इस संसार में किसी भी वस्तु के प्रति प्रेम उसके निमित्त नहीं होता, प्रत्युत वह प्रेम आत्मा के निमित्त होता है।

यही प्रेम सृष्टि में परमात्मा की निरन्तरता बनाए रखता है और आत्माएं एकाकार होती हैं। प्रेम अपने मूल स्रोत की ओर अग्रसर करता है। मीरा अपने लक्ष्य में सफल रही। मीरा बनना सरल नहीं, मीरा को समझना भी सहज न हीं है। उनकी स्मृति की यह पुष्पांजलि, उन्हीं के चरणों में।

-असम विश्वविद्यालय, सिलचर

महिमा

डॉ. कल्याण प्रसाद वर्मा

भक्ति और ज्ञान की धारा : विष्णुपुराण

अठारह पुराणों में श्री विष्णुपुराण का स्थान सर्वोच्च है। इसके रचयिता श्रीपाराशरजी है। यद वेद सम्मत पुराण श्रीपाराशरजी और श्रीमैत्रेय के संवादों में ग्रंथित है। संवादों के सूत्र से जुड़ा होने के कारण पूरे ग्रंथ में रोचकता आद्योपान्त बनी हुई है। विष्णुपुराण के संपूर्ण कलेवर पर दृष्टिपात करने पर पता चलता है कि इसमें भक्ति और ज्ञान की प्रशांत धारा तो प्रच्छन्न रूप से प्रवाहित है ही, साथ ही अन्यानेक विषयों सहित श्रीकृष्ण चरित्र का विशद् वर्णन भी मिलता है।

विष्णुपुराण छः अंशों और अध्यायों में विभक्त है। समस्त अध्यायों में कुल मिलाकर 6310 श्लोक हैं। जो इसका मान और महत्व बताते हैं। इसकी कथाएं एक विशाल पट को घेरे हुई है। इसमें सृष्टि की उत्पत्ति, प्रलय, वंश, मनवन्तर और वंशों के चरित्र, देवता, दैत्य, गंधर्व, नाग, राक्षस, यक्ष, विद्याधर, सिद्ध और अप्सरागण, आत्माराम, तपोनिष्ठ, मुनिजन, महापुरुषों के विशिष्ट चरित्र, पृथ्वी के पवित्र क्षेत्र, पवित्र नदी, समुद्र, वर्ण-धर्म तथा वेद और शास्त्रों का सम्यक् निरूपण किया गया है।

यह आर्षपुराण शाश्वत है, इसकी परम्परा शाश्वत है। श्री पाराशरजी धर्मज्ञ श्री मैत्रेय को बताते हैं कि इसको सबसे पहले भगवान ब्रह्माजी ने ऋभु को सुनाया। ऋभु से मुनिदर-मुनिदर वेदाशिरा पाताल लोक पहुंचे और उन्होंने यह समस्त पुराण प्राप्त किया। फिर प्रमति को सुनाया, प्रमति ने जातुकर्ण को दिया। जातुकर्ण ने अन्यान्य पुण्यशील महात्माओं को सुनाया। इसी क्रम में सारस्वत के मुख से सुना हुआ पुलस्त्यजी के वरदान से मुझे स्मरण रह गया सो वह ज्यों का त्यों तुम्हें सुना दिया और अब तुम भी कलियुग के अंत में इसे शिनीक को सुनाओगे।

सार रूप में देखें तो विवेच्य ग्रंथ के प्रथम अंश में चौबीस तत्वों के साथ जगत के उत्पत्तिक्रम का वर्णन, विष्णु की महिमा, ब्रह्मादि की आयु और काल का स्वरूप, देवता और दैत्यों द्वारा समुद्र मंथन, ध्रुव की तपस्या, नृसिंहावतार विषयक प्रश्न प्रह्लादकृत भगवद्-स्तुति और भगवान् का आविर्भाव तथा विष्णु भगवान की विभूति का वर्णन मिलता है, तो दूसरे अंश में भारतादि नौ खण्डों का विभाग, सात पातालों का वर्णन, भरत चरित्र, सूर्यनक्षत्र एवं राशियों की व्यवस्था, नवग्रहों का वर्णन, तीसरे अंश में सात मन्वन्तरों के मनु, सप्तर्षि का वर्णन, जातकर्म-नामकरण और विवाह संस्कार विधि, श्राद्ध-विधि, चौथे अंश में वैवस्वत मनु के वंश का विवरण, ययाति का चरित्र, यदुवंश का वर्णन पुरु और कुरु वंशों का वर्णन, कलियुगी राजाओं और कलिधर्मों का वर्णन मिलता है।

पांचवें अंश में वसुदेव-देवकी विवाह, कृष्णावतार का उपक्रम, भगवान का आविर्भाव, श्रीकृष्ण का गोवर्धनधारण, वृषासुरवध, उग्रसेन का राज्याभिषेक, भगवान का द्वारिकापुरी में लौटना, श्रीकृष्ण और वाणासुर संग्राम, परीक्षित का राज्याभिषेक व पाण्डवों का स्वर्गारोहण आख्यायित है। छठे अंश के आठवें अध्याय में उपसंहार स्वरूप श्रीपाराशरजी ने श्री मैत्रेयजी को संबोधित करते हुए कहा, हे मैत्रेय! मैंने तुमसे संसार की उत्पत्ति, प्रलय, वंश, मन्वन्तर तथा वंशों के चरित्रों का वर्णन किया है जो बहुत ही दुर्लभ है।

यह संपूर्ण शास्त्रों में सर्वपापविनाशक और पुरुषार्थ का प्रतिपादक वैष्णव पुराण मैंने सुना दिया, अब तुम्हें जो कुछ और पूछना हो पूछो। इस पर श्री पाराशरजी के प्रसाद से कृतार्थ हो धर्मज्ञ श्री मैत्रेयजी कहते हैं- भगवन मुझे जो जानना चाहिए, वह भली प्रकार जान गया हूं कि यह संपूर्ण जगत ईश्वर से भिन्न नहीं है। सभी भगवान विष्णु की ही प्रतिभूतियां हैं।

इस प्रकार विष्णु पुराण में भक्ति और ज्ञानरूपी पीयूष की धारा प्रवाहित है। धर्म और दर्शन की दृष्टि से आर्ष ग्रंथों में इसकी उपादेयता स्वयंसिद्ध है। इसके सुनने मात्र से यह मनुष्यों के दुःस्वप्नों को नष्ट करने वाला, संपूर्ण दोषों को दूर करने वाला, मांगलिक वस्तुओं में परम मांगलिक और संतान तथा संपत्ति का देनेवाला है।

महिमा: यों श्री विष्णुपुराण का प्रत्येक श्लोक भक्ति और ज्ञान से भरा है। शिक्षा के संदर्भ में भी इसका महत्व है। आज समाज में यत्र-तत्र तमोगुण और क्रोध का प्रवाह स्पष्ट दिखलाई पड़ता है। उस क्रोध के यश और तप का प्रबल नाशक बताया गया है। उस क्रोध को शांत करने के लिए इस पुराण का अध्ययन और श्रवण मानव के लिए निःसंदेह स्वयंद्धि और उपयोगी है।

-111/283, अग्रवाल फार्म, मानसरोवर
जयपुर-302020 (राजस्थान)

जीरा एक-गुण अनेक

मूलनारायण मालवीय वैद्य

जीरा भोजन के स्वाद में एक सौंधी महक ला देता है। यह मसालों का एक मुख्य अंग है। जहां इसके इस सर्वविदित गुण से सब परिचित हैं, वहां जीरे के अन्य गुणों के बारे में आयुर्वेद का मत है कि गर्भाशय शोधक, ज्वर में लाभ पहुंचाने वाला, स्मरणशक्ति बढ़ाने वाला और कफनाशक भी है। नेत्र के रोगों में भी यह गुणकारी है। सफेद जीरा और काला जीरा दोनों की गुणवत्ता समान है।

पेट के रोगों के लिए इसकी गुणवत्ता का कोई जवाब नहीं। यह पेट की ऐंठन दूर करता है। वायुगोला, बदहजमी और अंतड़ियों के दर्द में बहुत उपयोगी है। यूनानी हकीमों का कहना है कि सूजन और दर्द में जीरा मिले गर्म पानी में सिंकाई करने से बहुत लाभ होता है। बवासीर के मस्सों में अगर दर्द रहता हो तो जीरे की पुलटिस बनाकर बांधने से बहुत लाभ होता है।

पेट खराब होने पर दही में भुने हुए जीरे का चूर्ण मिलाकर देने से दस्त बंद होते हैं।

खुजली में चार तोला जीरा और दो तोले सिन्दूर को बत्तीस तोले सरसों के तेल में पका लिया जाये, इस लेप को लगाने से खुजली की पीड़ा अवश्य कम होगी।

कुत्ते के काटने में थोड़े से जीरे में पन्द्रह कालीमिर्च

अवलोकन

मंजुला जैन

विषम परिस्थितियों में सहजता जरूरी है

यह बात आम है कि विषम परिस्थितियों में नासमझ लोग कोई हल खोजने के बजाए दूसरों पर आरोप लगाने में भी समय गंवा देते हैं। ऐसे में अमूमन नकारात्मक सोच पैदा हो ही जाती है, लेकिन इसे दरकिनार कर सकारात्मक सोच पर ही स्वयं को केंद्रित करना चाहिए।

आराम और सुकून से चल रही जिंदगी में अगर अचानक ऐसी कोई घटना घट जाए, जिसकी आपने कल्पना भी नहीं की तो ऐसी स्थिति में अधिकांश लोग बिलकुल घबरा जाते हैं। हालाँकि कई तो ऐसे बौखला उठते है कि बाकी लोग भी विचलित हो जाते हैं। सभी के जीवन में कभी-न-कभी विषम परिस्थितियाँ आती हैं, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि आप उनसे घबराकर हार मान बैठें। ऐसी स्थितियों में सहजता एवं सहिष्णुता जरूरी है। मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार सहजता मनुष्य का प्राकृतिक गुण है, जो सबको आकर्षित करता है और एक-दूसरे को जोड़ने का काम भी करता है। यह विषम परिस्थितियों के बीच समता की स्थापना करता है। असफलता को सहन करने की शक्ति देता है। आइंस्टाइन जब कभी किसी प्रयोग में असफल हो जाते या किसी अन्य कारण से तनावग्रस्त होते, तो उसी समय वायलिन बजाने बैठ जाते। वायलिन बजाने में वे इतने मगन हो जाते थे कि उन्हें अपनी असफलता के विषय में कुछ भी याद नहीं रहता था। इस गतिविधि से वे पूरी तरह शांत हो जाते और नई ऊर्जा के साथ नये प्रयोग में जुट जाते थे। जब भी हम जी-जान से किसी कर्म में लग जाते हैं तो सफलता मजबूर होकर हमारे कदम चूमती है। उसे चूमना ही होता है, वह बंधी हुई है नियम से, जो कालांतर से चला आ रहा है। यदि आप कहीं फेल हो गए हैं तो ऐसा नहीं है कि सृष्टि ने आपके साथ धोखा कर अपना नियम बदल दिया है। ऐसा नहीं होता, हमें सहजता एवं धैर्य से इन वितरीत परिस्थितियों का सामना करना चाहिए। जबकि अधिकांशत: देखने में आता है कि हम उन्हीं परिस्थितियों में साथ सहज रह पाते हैं जो हमारे मनोनुकूल होती है। जबकि हर स्थिति में सहजता जरूरी होती है

क्योंकि ऐसा होने पर ही हम विषम परिस्थितियों में धैर्य बनाए रख सकते हैं और अपना आपा नहीं खोते है।

आखिर विषम परिस्थितियां क्यों आती है? जिन्दगी क्यों भार स्वरूप लगने लगती है? क्यों हम स्वयं से ही खफा से रहने लगते हैं? इसका सबसे बड़ा कारण है हमने जीने के जो साफ सुथरे तरीके थें, या जो जीवनमूल्य थे उन्हें भूला दिया है। जिंदगी का मकसद अगर खुद को खुश रखते हुए अपने से जुड़े, आस-पड़ोस के लोगों की भलाई की चाहत है तो इनमें एक धुंधला-सा रंग चढ़ गया है। शायद यही वजह है कि हमारे समाज की सामूहिक जिंदगी और व्यक्ति की व्यक्तिगत जिन्दगी छीजती जा रही है, इसमें गिरावट दर्ज की जा रही है और अंतरात्मा की आवाज पर गौर करने के बजाय अनसुना करने, उसकी अवहेलना करने का प्रचलन, किसी चालू फैशन की तरह, जोर पकड़ता जा रहा है।

तो क्या इंसानी समाज अपनी स्वभावगत उदात्त चीजों को सहेजने के बजाय इन्हें किसी कोने में पड़ी रद्दी की टोकरी में डालता जा रहा है? क्या इंसान किसी अंधेरे, संकरे बदबूदार, दमघुटे दरिया में बगैर पतवार संभाले बहता जा रहा है? क्या वह किन्हीं अनिश्चित और खतरनाक उद्देश्यों की ओर आंख मूंदे भागता जा रहा है? यकीनन नहीं, नहीं!

वक्त आसमान में परवाज भरती चिड़िया के पंख पर भले ही सवार हो, लेकिन इंसान की तबीयत ही कुछ ऐसी है कि वह पंख के पार भी देखता है, भारी पहाड़ों तक को लांघता है, वक्त से जूझता है और जिंदगी की दिशा में नए-नए रास्ते तलाशता है।

परिस्थितियाँ कितनी भी विषम क्यों न हो सबसे पहले जरूरत है शांत स्वभाव की। कहते हैं न कि बुरे वक्त में समझदार मनुष्य पहले से भी ज्यादा समझदार हो जाता है और फिर यही समय तो आपके धैर्य, सोच और सहनशीलता की परीक्षा का होता है। ऐसी स्थिति में सबसे पहले शांत रहकर अपना दिमाग पूरी तरह इसमें लगा देना चाहिए ताकि बद से बदतर होती स्थिति को सुधारने पर विचार कर सकें। अपनी समस्या का जिक्र केवल अपने चुनिंदा विश्वसनीय परिचितों से ही करें, जो आपको ऐसे समय में सही सलाह दे सकें। ज्यादा लोगों को बताने से स्थिति आपके विपरीत भी हो सकती है और हास्यास्पद भी।

अधिकतर देखने में आया है कि विषम परिस्थितियों में लोग अपने इष्ट को या तो अचानक बहुत याद करने लगते हैं या फिर उनसे शिकवा-शिकायत और धमकी भरी बातें शुरू कर देते हैं। ऐसा व्यवहार ठीक नहीं, विषम परिस्थितियाँ तो केवल आपकी परीक्षा लेती हैं। कई लोग घबराकर इसे अपने पर आई मुसीबत मानते हैं और इसकी जिम्मेदारी वे दूसरों पर डालने लगते हैं।

यह बात आम है कि विषम परिस्थितियों में नासमझ लोग कोई हल खोजने के बजाए दूसरों पर आरोप लगाने में भी समय गँवा देते हैं। ऐसे में अमूमन नकारात्मक सोच पैदा हो ही जाती है, लेकिन इसे दरकिनार कर सकारात्मक सोच पर ही स्वयं को केंद्रित करना चाहिए। धैर्य से हर कदम फूँक-फूँककर चलने से आखिरकार आप विषम परिस्थिति पर विजय पा ही लेते हैं। हालाँकि कोशिश तो ये भी करनी चाहिए कि न केवल खुद को बल्कि उससे प्रभावित परिचितों या परिजनों को भी संयम से काम करने की सलाह दें और उनका मनोबल ऊँचा करें। ऐसी आपदा में एक बात सदैव याद रखें कि विषम परिस्थितियाँ जीवन में अधिक देर के लिए नहीं आती। आपके धैर्य, संयम और सूझबूझ को परखकर चुपचाप चली जाती हैं। जीवन में सद्विचारों को दृढ़ता से अपनाएं तो स्वत: ही उसके प्रभाव से धीरे-धीरे मनुष्य सद्गुणों में परिवर्तित होता जाता है। यह अज्ञात परिवर्तन उसे मालूम नहीं होता है। सहजता व्यक्तित्व के विकास की सीढ़ी है। यह एक ऐसा गुण है, जो व्यक्ति की एक अलग पहचान बनाता है। आशा, उम्मीद की ये किरणें बदले हुए मायनों और मकसदों में भी बुराई और भलाई का भेद सिखाती हैं। ये बताती हैं कि कितनी भी गाढ़ी निराशा क्यों न हो, यह बस चंद दिनों की मेहमान होती है कि इससे आगे इंसानी जिंदगी को खूबसूरत बनाने के एहसासों का खुला आसमान छिटका पड़ा है। इस दिशा में इकलौती कोशिश भी एक अहम शुरुआत का पहला कदम साबित होती है, जरूरत बस बदले सुरों में चीजों को स्वीकार करने की तैयारी की है। ■

भारत भूषण

वृद्धजनों की दुर्दशा
वेदों में क्या है हल ?

वेदों और दूसरे ग्रन्थों ने माता–पिता को देवता का जो पद दिया था, उसके पीछे यही मंतव्य था कि वे बच्चों को जन्म देने वाले जनक–जननी हैं, उनका पालन–पोषण करने वाले हैं और उन्हें शिक्षा देने वाले भी। इसलिए उन्हें मात्र सम्मान ही नहीं देना है, बल्कि उनकी देखभाल भी ठीक से करनी है।

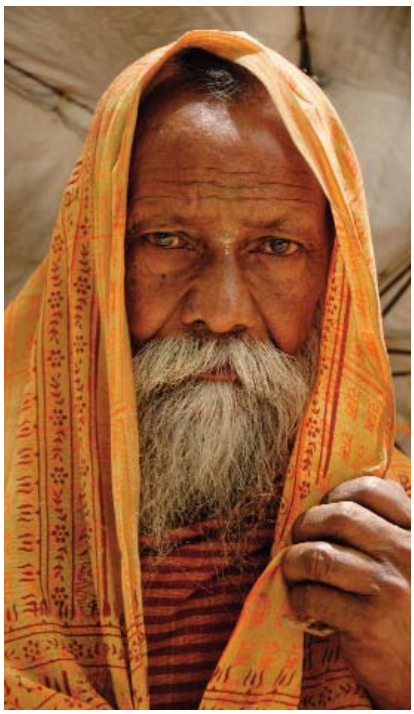

पश्चिमी देशों की तथाकथित सभ्यता में जिस दिन से माता-पिता सेवानिवृत्ति ग्रहण कर लेते हैं या उन्हें अवस्थाजन्य विकृति आ घेर लेती है, वे उसी क्षण से परिवार के लिए बोझ बन जाते हैं। फिर उनके परिजन ही उन्हें वृद्धाश्रमों में छोड़ आते हैं। अब ये आश्रम चाहे सरकार द्वारा संचालित हों अथवा कोई और सामाजिक संस्था इन्हें संचालित कर रही हों। इन आश्रमों में रह रहे वृद्ध माता-पिता से उनकी संतानें गाहे-बगाहे क्रिसमस या नव वर्ष पर मिलने और बधाई देने आ जाते हैं और अपने तथाकथित प्रेम या कर्तव्य का प्रदर्शन कर जाते हैं।

परिवारजन चाहे कितने ही स्वस्थ या धनवान् हों, वे यही चाहते हैं कि उनके वृद्ध माता-पिता उनसे अलग ही रहें, चाहे कोई पालतू पशु रख लें या कोई सेवक रख लें अपने पास। ऐसी स्थिति में उनके सुख-दु:ख को बांटने वाला कोई नहीं होता है। वे तो बस आखिरी घड़ियां गिनते हुए दु:ख भरी जिन्दगी के बचे हुए दिन काटने लगते हैं।

भारत में जहां पाश्चात्य सभ्यता धीरे-धीरे अपनी जड़ें जमा रही है, थोड़े परिवर्तन के साथ, यही प्रवृत्ति देखने में आने लगी है। अब भारत में भी संयुक्त परिवार प्रथा का विघटन प्रारम्भ हो चुका है। लड़के विवाह के बाद अपना अलग घर बसाना चाहते हैं, अपने परिवार, माता-पिता, भाई-बहनों से दूर। धीरे-धीरे सब बच्चें अपना अलग परिवार बसा लेते हैं, मां-बाप को खुद के भरोसे छोड़ कर।

आए दिन ऐसी भी घटनाएं टी.वी. चैनलों में देखने या समाचार पत्रों में पढ़ने को मिल जाती हैं कि बच्चों ने बूढ़े मां-बाप को धक्के मार कर घर से निकाल दिया। यहीं नहीं, जमीन-जायदाद के लिए उन्हें जान से मारने तक की घटनाएं आम होने लगी हैं।

ऐसी घटनाएं उस देश में घटित होना तो और भी चौंकाने वाली बात है, जहां हमारे धर्म ग्रन्थ हमें यही सिखाते आ रहे हैं कि अपने माता-पिता को देवता स्वरूप समझो-

मातृ देवो भव पितृ देवो भव।

(तैत्तिरीय उपनिषद्)

एक समय था, जब माता-पिता को देव-तुल्य समझा जाता था और उनके जीवन-यापन का पूरा दायित्व परिवार पर था। आज वे पशु-तुल्य बना दिए गए हैं या उससे भी बदतर! मूल्यों में कितनी गिरावट आ गई है। रिश्तों के वे बंधन और उसकी वह गर्माहट, जिससे पूरा परिवार एकसूत्र में बंधा रहता था, अब अतीत की बात बन चुका है।

वेदों और दूसरे ग्रन्थों ने माता-पिता को देवता का जो पद दिया था, उसके पीछे यही मंतव्य था कि वे बच्चों को जन्म देने वाले जनक-जननी हैं, उनका पालन-पोषण करने वाले हैं और उन्हें शिक्षा देने वाले भी। इसलिए उन्हें मात्र सम्मान ही नहीं देना है, बल्कि उनकी देखभाल भी ठीक से करनी है। विशेषकर तब, जब वे वृद्ध हो चुके हैं।

वेदों में पुत्र के लिए स्पष्ट आदेश है कि वे माता-पिता की भक्ति-भाव से सेवा करें, उन्हें यथोचित प्रेम और आदर दें, रहने के लिए उचित स्थान दें, उनके लिए स्वास्थ्य वर्द्धक भोजन की व्यवस्था करें और साथ ही उनकी छोटी-मोटी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हाथ खर्च भी दें।

यजुर्वेद में संतान के लिए माता-पिता द्वारा किए गए कार्यों के प्रति आभार और कृतज्ञता से ओतप्रोत एक मंत्र इस प्रकार है-

नमो व: पितरो रसाय नमो व: पितर: शोषाय नमो व:
पितरो जीवाय नमो व: पितर: स्वधायै नमो व:।
पितरो धोराय नमो व: पितरो मन्यवे नमो व: पितर: पितरो नमो व: गृहान् न: पितरो व:

(यजु.2,32)

ऋग्वेद के एक मंत्र में इसे और स्पष्ट करते हुए लिखा है-

आ माता विश्ववारे हुवानो यतो यविष्ठ जज्ञिषे सुवीर:।

(ऋ. 7,7,3)

माता-पिता जो संतान के जन्म तथा पालन-पोषण के लिए उत्तरदायी हैं, वे उस संतान को प्रसन्नता और सुखी जीवन भी प्रदान करते हैं और इसीलिए वे अपनी संतति के लिए स्तुत्य और सम्माननीय हैं तथा प्रेम के पात्र हैं। इसीलिए संतान के सभी प्रयास अपने जनक-जननी को प्रसन्नता और आराम देने के निमित्त होने चाहिए।

ऋग्वेद कहता है-जो पुत्र अपने माता-पिता की विशेष प्रकार से देखभाल करते हैं, वे स्वयं उच्च स्थिति पर पहुंच कर सम्मानित होते हैं और वे विशेष पुण्य और आशीर्वाद के भागी बनते हैं।

इसी वेद के निम्न मंत्र में माता-पिता को धन, रहने के लिए आरामदायक स्थान, नए वस्त्र तथा अच्छे उपहार देने के आदेश पुत्र को दिए गए हैं-

परा नववास्त्वमनुदेयं महे पित्रो ददाथ
स्वं नपातं॥

(ऋ. 6-20-11)

अथर्ववेद 8-10-314 में भी पुत्रों के लिए अपने माता-पिता को नियमित धन उपलब्ध कराने की बात कही गई है। इसे 'स्वधा' कहा गया है। यह एक प्रकार का गुजारा भत्ता है, जो पुत्रों को उन्हें देना लाजिमी है, ताकि वे अपनी छोटी-मोटी आवश्यकताओं के लिए किसी पर आश्रित नहीं रहें। यह स्वधा उन्हें उस सूरत में भी देय है जब वे वैदिक परम्परा के अनुसार, किसी एक आश्रम में रह रहे होंगे।

एक अन्य धर्म ग्रन्थ में भी इसी प्रकार का वर्णन मिलता है। बच्चे जब अपने माता-पिता के धन पर पले बढ़े हैं, तो बूढ़े होने पर वे भी बच्चों से गुजारा भत्ता पाने के हकदार हैं।

यदि माता-पिता स्वस्थ हैं और अलग रह सकने की स्थिति में हैं अर्थात् स्वतंत्र रूप से अपना जीवनयापन कर सकते हैं, तो वे वानप्रस्थ आश्रम में रहने पर विचार कर सकते हैं और फिर

समय आने पर संन्यास आश्रम में जा सकते हैं (जैसा वेदों में प्रावधान है।) इन आश्रमों में रहते हुए यदि उन्हें अपने पुत्रों या अन्य परिवार-सदस्यों द्वारा किसी त्यौहार या अन्य अवसर विशेष पर आमंत्रित किया जाता था, तो वे आशीर्वाद देने के लिए उनके पास आकर रुक सकते थे। निःसंदेह हमारे धर्मग्रन्थों का अभिप्राय जीवन को चार चरणों में विभक्त करने का रहा, जिनमें वानप्रस्थ और संन्यास आखिरी दो आश्रम थे।

लेकिन दुर्भाग्य है कि आज ऐसे आश्रम नहीं हैं, जो कि शान्त और आध्यात्मिक वातावरण प्रदान कर सकें। राजनीति ने सब तरफ अपनी पैठ जमा रखी है और इन आश्रमों को राजनीति का अड्डा बना डाला है। यही नहीं, इन आश्रमों में पल्लवित 'गुरु व्यवस्था' ने सारा ध्यान और श्रद्धा भगवान् से हटाकर आश्रम के मुखिया पर टिका दिया है। हो सकता है यह व्यवस्था सबको अनुकूल न लगे। बजाए इसके कि सभी आश्रमवासियों को अपना रास्ता स्वयं तय करने की स्वतंत्रता मिले, एक निश्चित व्यवस्था विशेष उन पर थोप दी जाती है, जो सब को समान रूप से स्वीकार्य हो, आवश्यक नहीं है। जो आश्रम प्रथम दृष्टया बड़े आकर्षक विकल्प के रूप में नजर आते हैं, उनमें रहने वाले वृद्धजनों को ऐसी कुछ परेशानियों का सामना करना पड़ता है।

यदि वृद्ध माता-पिता को रहने के लिए कोई मनोनुकूल आश्रम नहीं मिलता है तो उन्हें अपने परिवार के संग इस ध्येय वाक्य के साथ रहना श्रेयस्कर होगा- पद्मपत्रमिवाम्भसः।

अर्थात् जल कुण्ड में कमल के समान निर्लिप्त रहें। यानी घर में रहें, पर सब प्रकार के ममत्व और जुड़ाव से ऊपर उठें। किसी भी व्यक्ति से कुछ भी उम्मीद नहीं रखें। आपका परिवार जो भी कर रहा है, उसके प्रति कृतज्ञ रहें और ईश्वर का धन्यवाद करें। इनके व्यक्तिगत मामलों में हस्तक्षेप नहीं करें। बिन मांगे सलाह नहीं दें। स्वयं भी शान्तिपूर्वक रहें और दूसरों को भी चैन से रहने दें। बोलें कम, सुनें अधिक। उन पर अपनी मान्यताओं को थोपे बगैर पृष्ठभूमि में रहकर जरूरत पड़ने पर उनकी मदद भी करें। धर्मग्रन्थों, रोचक पुस्तकों, अखबार-पत्रिकाओं को पढ़ने और टी.वी. देखने के अतिरिक्त अपना अधिकतर समय जप, साधना, योग, व्यायाम, भ्रमण आदि में व्यय करें। फिर भी लत तो इनमें से किसी की नहीं पड़नी चाहिए। बन्धनमुक्त रहें।

वेदों के अनुसार अन्तिम लक्ष्य है- मुक्ति। उसे याद रखें। इसी क्षण से इस दिशा में कार्य प्रारम्भ कर दें।

रूपान्तरणः डॉ. (सुश्री) आदर्श शर्मा
-सी-302, नागर रेजिडेन्सी
केलगरी रोड, मालवीय नगर, जयपुर

क्या होता है मरने के बाद

श्रीगोपाल नारसन

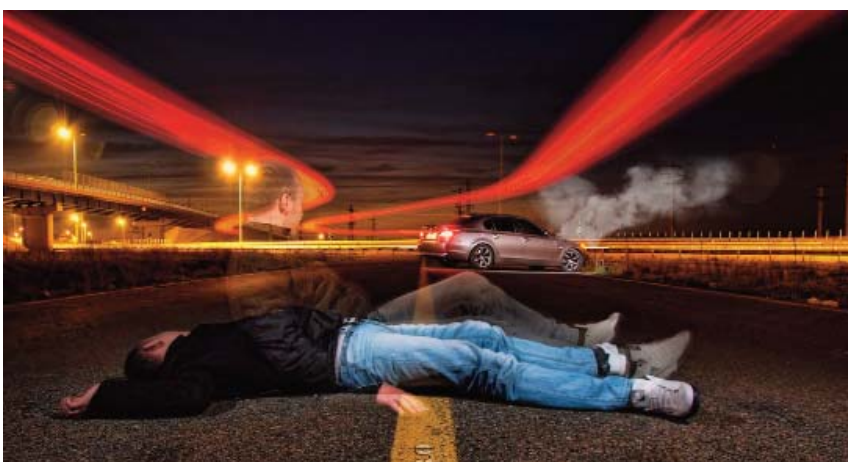

मरने के बाद क्या होता है? इस रहस्य को लेकर प्रायः हर किसी में उत्सुकता बनी रहती है। एक बार मरने के बाद पुनः जीवित हो उठने वालों के अनुभव भी काफी दिलचस्प और अनोखे हैं। बताते हैं कि किसी दुर्घटनावश मृत्यु को प्राप्त व्यक्ति की आसक्ति अपनी मृत देह व परिजनों के प्रति बनी रहती है। इसी आसक्ति को समाप्त करने के लिए चिता को मुखाग्नि देने के बाद कपाल क्रिया और कंकर डालने की रस्म पूरी की जाती है।

अनेक घटनाएं ऐसी भी हुई हैं जिनके बारे में सुनकर ऐसा लगता है कि इस दुनिया की तरह ही एक दुनिया और भी है जहां सीधे भगवान रूपी शक्ति के अधीन हम मरने के बाद हो जाते हैं। उस अलौकिक दुनिया में यमराज और यमराज के दूतों के साथ-साथ प्रत्येक जीव के मरने-जीने का लेखा-जोखा रूपी विवरण भी मौजूद है।

वहीं जिस तरह से इस संसार में मनुष्य चाहे-अनचाहे गलती कर बैठता है, वैसी ही गलती कई बार ऊपर की दुनिया अर्थात यमलोक में भी हो जाती है। ऐसी कई घटनाएं समय-समय पर प्रकाश में आई हैं जब व्यक्ति एक बार मृत घोषित हो जाने के घण्टों बाद पुनः जीवित हो उठता है। हाल ही में एक मृत व्यक्ति उस समय पुनः जीवित हो उठा जब उसके मरने के लगभग 12 घंटे बाद चिकित्सक उसके पोस्टमार्टम की तैयारी कर रहे थे।

एक बार मरने के बाद व्यक्ति कैसा अनुभव करता है? इस बारे में भी अलग-अलग धारणाएं हैं। कुछ का कहना है कि प्राकृतिक मृत्यु होने पर जहां मृत व्यक्ति को हल्कापन महसूस होने के साथ उसे असीम शांति मिलती है, वहीं असमय हुई मृत्यु में मृत व्यक्ति स्वयं को एक धागे के महीन रूप की तरह अनुभव करता है और मरने के काफी समय बाद तक अपनी मृत देह के साथ-साथ परिजनों को रोते-बिलखते भी देखता रहता है। परन्तु वह चाह कर भी कुछ नहीं कर पाता। इस कारण वह बेचैनी भी महसूस करता है।

मरने के बाद पुनः जीवित हो उठने वालों में एक नाम परसन्दी का है, जो उत्तरप्रदेश के जनपद सहारनपुर अंतर्गत नागल गांव की रहने वाली थी। वृद्धावस्था के दौरान घर में अकेली रह रही परसन्दी मर गई और अचानक फिर से जीवित हो उठी। पुनः जीवित होने पर परसन्दी ने बताया कि यमदूत उसे गलती से ले गए थे। जबकि यमदूतों को गांव की ही किसी दूसरी परसन्दी को ले जाना था। इस गलती के लिए यमलोक में यमदूतों को डांट भी पड़ी थी और गलती से ऊपर पहुंची परसन्दी ने जब वापिस लौटने से यमदूतों से इंकार किया तो यमदूतों ने परसन्दी को डण्डे मारे जिसके निशान परसन्दी के शरीर पर पुनः मरने तक बने रहे। इस घटना की पुष्टि उसी परिवार के घनश्याम बादल ने की है।

इसी प्रकार डाक विभाग में कार्यरत रहे हीरालाल नामक व्यक्ति की मृत्यु होने पर जब वह पुनः जीवित हुआ तो उसने अपना मृत्युकाल का अनुभव सुनाते हुए कहा कि यमलोक में बैठे एक दाढ़ीवाले बाबा ने उसका रिकार्ड देखकर बताया कि हीरालाल की उम्र अभी साढ़े सत्रह साल बाकी है, इसे वापिस भेजो। इस पर जब यमदूतों ने उसे ऊपर से ही नीचे फेंक दिया तो पुनः जीवित हो उठने के बाद भी उसकी कमर में पुनः मृत्युपर्यन्त तक दर्द की शिकायत बनी रही।

ऐसी एक-दो नहीं, अनेके घटनाएं हैं जब एक बार मर चुके व्यक्ति द्वारा पुनः जीवित हो उठने पर ऊपर की दुनिया के रोचक किस्से सुनाये गये हैं। जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि ऊपर की दुनिया का भी कहीं न कहीं कोई न कोई वजूद जरूर है।

-पो.बा.नं. 81, रूड़की (उत्तराखण्ड)

श्री नैथेलियन विलियम्स्

अंगूर: एक औषधि

अंगूर में एक विशिष्ट प्रकार की शर्करा होती है। हमारे पाचन-प्रणाली का कार्यभार बढ़ाये बिना शरीर उसका उपयोग कर लेता है। वह शर्करा रक्त के नार्मल योगजों में एक है। उससे ही हमें शक्ति मिलती है। अत: यदि कोई व्यक्ति निराहार रहे तो उसे अपना मामूली कामकाज चलाने के लिए अंगूर लेते रहने पर किसी अन्य आहार की अपेक्षा नहीं होगी।

हाल में हुए शोधों से एक बात प्रकाश में आई है, जिसकी कल्पना बहुत पहले से की जा रही थी। वह बात यह कि पूरा अंगूर, छिल्का-गूदा समेत खाया जाये, तो उसमें बेहतर अधिक औषधीय गुण होता है। ध्यान रखिए, मैं यह बात समूचे अंगूर के प्रयोग के बारे में कह रहा हूं... मीठा किये गये अंगूर के बारे में नहीं और न तो गूदा छिलका-विहीन अंगूर के रस के बारे में, ये दोनों ही समूचे अंगूर से ओछे हैं। अंगूर को 'फलों की रानी' कहना सर्वथा सार्थक है। अंगूर उतना ही पुराना फल है, जितना कि इतिहास।

अंगूर में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन 'ए' तथा 'बी' उपलब्ध हैं। इनके अतिरिक्त विभिन्न मात्राओं में उसमें खनिज लवण-पोटेशियम, लौह, कैलशियम, मैंगनीज, क्लोरीन, फ्लोरिन, सल्फर, फास्फोरस उपलब्ध हैं।

अंगूर में एक विशिष्ट प्रकार की शर्करा होती है। हमारे पाचन-प्रणाली का कार्यभार बढ़ाये बिना शरीर उसका उपयोग कर लेता है। वह शर्करा रक्त के नार्मल योगजों में एक है। उससे ही हमें शक्ति मिलती है। अत: यदि कोई व्यक्ति निराहार रहे तो उसे अपना मामूली कामकाज चलाने के लिए अंगूर लेते रहने पर किसी अन्य आहार की अपेक्षा नहीं होगी।

अंगूर खाने से अथवा अंगूर का रस पीने से पाचन-प्रणाली को भी सहायता मिलती है। अंगूर रेचक है तथा यकृत और गुर्दे को उत्तेजना देने वाला है। यह नया रक्त बनाता है और पुराने रक्त का शोधन करता है। प्रयोगकर्ताओं को दीर्घायुष्य प्रदान करता है। यह ठण्डक पहुंचाता है तथा व्यक्ति को निरोगी बनाता है। अंगूर सभी को रास आने वाला फल है। अंगूर में उपलब्ध आर्गेनिक लौह को शरीर बड़ी सरलता से आत्मसात कर लेता है। शरीर में लौह की आपूर्ति अंगूर खाकर पाचन का बोझ बढ़ाये बिना सरलता से की जा सकती है।

अनेक स्थितियों में आराम पहुंचाने की दृष्टि से अंगूर के रस का प्रयोग किया जा सकता है। शरीर को विजातीय द्रव्यों से मुक्त करने और कचड़े को निकालने के लिए कोई छोटा उपवास कर लेना अच्छा है। उपवास के बाद अंगूर का रस शक्तिशाली रोगनाशक के रूप में काम करता है। उसके पोषक तत्व शरीर में शक्ति बनाये रखते हैं। पेट और आंतों में जो श्लेष्मा कठोरीकृत होकर चिपकी रहती है, अंगूर के रस के सामने नहीं टिक पाती है। एनिमा लेते रहने से ये विषाक्त तत्व स्वाभाविक रूप में शरीर से बाहर निकल जायेंगे।

अंगूराहार की विभिन्न लोगों में भिन्न-भिन्न प्रतिक्रिया होती है, वह तत्काल लाभकारी भी हो सकता है और परेशानियां भी पैदा कर सकता है। यदि कोई नार्मल स्वास्थ्य वाला व्यक्ति अंगूर को आहार के रूप में लेने लगता है तो उस पर उसका कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता और उसे तत्काल उसका लाभ नजर आयेगा। उसका वजन नहीं घटेगा और वह अपना दैनिक काम-धाम निर्बाध करता रहेगा। जो बीमार है, वह जब अंगूर को आहार के रूप में लेने लगता है तो वह देखता है कि वे स्थितियां जो उसके शरीर में उसकी जानकारी से परे छिपी थी, अब प्रकट हो रही हैं। शरीर की स्थिति के निदान के लिए यह एक बड़ी अच्छी विधि है।

संक्षेप में कहना हो तो कहेंगे कि अंगूर के आहार का औषधीय गुण वर्णतातीत है। इस आहार में पोटाश बड़ी अधिक मात्रा में उपलब्ध है। यह गजब का टॉनिक है। कोषा के प्रोटोप्लाजम के प्रोटीनी आधार से इसका बड़ा घनिष्ठ संबंध है। इसलिए, क्षत ऊतकों के मरम्मत की इसमें क्षमता अगाध है। मांस तथा मांसपेशियों के निर्माण की दृष्टि से यह बेजोड़ है। अंगूर का आर्गेनिक अम्ल बेहद ऐंटीसेप्टिक है। मसूड़ों पर उसका महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। यदि आपके दांतों की जड़ें विषाक्त हो गई हों तो दांत उखड़वायें नहीं, कुछ सप्ताहों तक मात्र अंगूर खाने से यह स्थिति समाप्त हो जाएगी। जिन लोगों में शराब की ललक (क्रेज) हो, उन्हें अंगूर का रस दें। उसमें न तो चीनी मिलायें, न खमीर उठने दें। यह शराब का सर्वोत्तम विकल्प है। इससे शराब की आदत भी छूटेगी और शरीर को पोषण भी मिलेगा। ■

गुणकारी नींबू

नीबू थकान दूर करता है, कई बीमारियों से बचाता है। दमा, खांसी व जुकाम वालों को नीबू सेवन बिना मार्गदर्शन के नहीं करना चाहिए। नीबू अधिक अम्लीय होता है इसके लिए इसमें काला नमक मिलाकर लेना चाहिए। गुनगुने पानी में नीबू व शहद डालकर पीने से वजन घटता है। नीबू में विटामिन सी होने से वह रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाता है।

गंगाजल–आयुर्वेदिक औषध

● के. सुलोचना ●

वैश्विक स्तर पर आयुर्वेद की महत्ता को स्वीकार किया जाने लगा है। भारतीय जड़ी-बूटियां रोग को समूल नष्ट करती है। कुछ लाभकारी वनस्पतियां जैसे आंवला, तुलसी आदि का नियमित सेवन किया जाए तो बीमारी होने की संभावना ही नहीं रहती। जड़ी-बूटियों का शारीरिक अवस्थानुसार सेवन किया जाए तो अमृत का कार्य करती हैं। जीवनीय शक्तियों को बढ़ाकर शरीर को निरोग बनाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार दक्षिण पूर्व एशिया के अधिकांश देशों में आयुर्वेद का प्रचलन है। इस चिकित्सा पद्धति को विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 'आयुर्वेदा' नाम से सम्बोधित किया तब भारत में भी इसको महत्व दिया जाने लगा जबकि 'आयुर्वेद' अथर्ववेद का उपांग है। आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति विश्व की सबसे प्राचीन तथा भारत की अमूल्य धरोहर है। भारतीय वृक्ष नीम के विलक्षण प्रभाव को जानने के लिए विदेशों के शोधकर्ता लगे हुए हैं।

आयुर्वेद और गंगाजल का आदिकाल से संबंध है। गंगा हिमालय के उद्‌गम स्थल गोमुख से निकलकर गंगोत्री से होते हुए, भारत भूमि में संचार करती हुई, बंगाल की खाड़ी में गिरती है। हिमालय से निकलने के बाद गंगा रास्ते में पड़नेवाली दिव्य औषधियों के स्पर्श से अपनी जलधारा में औषधीय तत्वों को लेती हुई आगे बढ़ती है। इसलिए 'गंगाजल' में आयुर्वेदीय जड़ी-बूटियों का सम्मिश्रण रहता है। यह जल अपने आप में एक औषधि है, इसलिए तो गंगाजल को अमृत कहा गया है। गंगाजल में विद्यमान औषधीय तत्वों को आधार बनाकर अनेक औषधियों का निर्माण किया जा सकता है। हमारे पूर्वजों ने मरणासन्न व्यक्ति के मुंह में गंगाजल व तुलसी दल को देने की परम्परा प्रचलित की क्योंकि वह पीड़ा का हरण कर मूर्च्छा को दूर करती है। प्राण निकालने के लिए व्याकुल देह से प्राण को मुक्त करने में भी सहयोग करती है। भारत में किसी स्थान पर, अपनी परम्परा से आस्था रखनेवाला कोई भी व्यक्ति जब स्नान करता है तो उसके मुख से अनायास ही फूट पड़ता है–

'गंगे च यमुने चैव गोदावरी व सरस्वती,
नर्मदे, सिन्धु, कावेरी, जलेऽस्मिन सन्निधि कुरू।'

इससे यह प्रतीक रूप में स्पष्ट होता है कि भारत की सांस्कृतिक विरासत एक ही है।

दुख की बात यह है कि आज धरती पर गंगा का अस्तित्व खतरे में है। विश्वभर में मां के रूप में पूजी जानेवाली गंगा को प्रदूषण से मुक्त करना होगा। प्रत्येक व्यक्ति को गंगा की स्वच्छता के प्रति जागरूक होना चाहिए। गंगा सिर्फ एक नदी का नाम नहीं है। यह उस भारत की जीवनदी है। यह हमारे गौरवपूर्ण इतिहास की उस पवित्र जलधारा का नाम है जिसके तट पर सदियों से अनेक संस्कृतियों, सभ्यताओं का श्रीगणेश हुआ। गंगा विश्व एकता, विश्व बंधुत्व तथा विश्व संस्कृति की भावना की प्रतीक है।

हमारा मानना है कि गंगा राष्ट्रधारा और राष्ट्रीय चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। इस जीवनदी गंगा की अस्मिता को बचाये रखना है तो गंगा को प्रदूषित और विलुप्त होने से बचाना होगा।

हिमालय से निकलकर बहनेवाली गंगा के दोनों ओर देवदास वृक्षों के घने जंगल है। हिमालय से निकलनेवाली नदियों मुख्यत: गंगा को जीवनदायी और स्वास्थ्यवर्द्धक मानते हुए कहा गया है–'हिमवत्प्रभवा: पश्या:।' शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिए उपयोग में आनेवाली जड़ी-बूटियों को अपने साथ लेकर बहनेवाली जीवन नदी गंगा की पवित्रता को बनाये रखने का काम हम सभी को मिलकर करना है।

–अनुग्रह अपार्टमेंट, बी-ब्लॉक, द्वितीय तल, 22 जकारिया कॉलोनी मैन रोड, चोलाईमेदु, चैन्नई-600094 (तमिलनाडु)

नीम के विभिन्न उपयोग

प्रभा जैन

प्रकृति में जितनी चीजें हैं, वे दो हिस्सों में बंटी हैं। एक गरम और दूसरी तर। हिन्दुस्तान एक ग्रीष्म प्रधान देश है अत: प्रकृति ने यहां तर चीजें ही अधिक पैदा की हैं। यहां पर ऐसे बहुत से पेड़, पौधे, जड़ी-बूटियां पैदा होती हैं, जो ठण्डक पहुंचाती हैं।

नीम हिन्दुस्तान के ऐसे ही मशहूर और लाभ पहुंचाने वाले वृक्षों में से एक है। इसके गुणों को यहां का बच्चा-बच्चा जानता है। यह पेड़ अकेले ही सैकड़ों बीमारियों को दूर करने की ताकत रखता है।

नीम के विषय में वैद्यक ग्रंथों में जहां भी जिक्र आया है, इसे व्रण और कुष्टनाशक जरूर लिखा है। सभी ने इसे रक्त शुद्ध करने में उत्तम माना है। वसंत ऋतु में कफादि दोष कुपित होकर नाना प्रकार के चर्मरोग उत्पन्न करते हैं। इस ऋतु में महीने भर नीम का सेवन करने से साल भर हृदय शुद्ध रहता है। विषैले जानवरों के काटने से प्राण संकट में भी मनुष्य बच जाता है।

जो मनुष्य मेष के सूर्य में मसूर की दाल को नीम के पत्ते के साग के साथ खाता है, उसे साल भर विष से कोई भय नहीं रहता।

बंगाल में आज भी इसी से मिलता-जुलता एक प्रयोग प्रचलित है। यहां चैत्र मास में बैंगन की तरकारी में नीम के पत्ते पकाकर लोग खाते हैं। मनुष्य के अलावा पशुओं की बीमारी में भी नीम का उपयोग होता है।

नीम का उपयोग देहातों में विशेषकर होता है। यदि नीम तथा इसी तरह के उपयोगी वृक्ष न होते, तो ग्रामीणों को बड़ी मुश्किल होती।

नीम का फल चीड़ा, प्रमेह, वात और कफनाशक है तथा गरम रूखा पचने पर कड़वा और हल्का है। वमन, कुष्ट, विष, ज्वर, कफ, खुजली और प्रमेह को नीम नाश करता है तथा रक्त का शोधन करता है।

नीम खाने में तो कड़वा लगता है परन्तु अरुचि वालों को बहुत लाभ पहुंचाने वाला और अमृत तुल्य है। नीम की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह खाने के बाद ही मालूम होने लगता है। कुछ मौके पर नीम दिव्य औषधियों के रूप में गिना जाता है।

नीम विपाक में कटु है। जो चीज विपाक में कटु होती है, वह हल्की होती है। उसका वीर्य पर बुरा असर पड़ता है और वह वायु को बढ़ाने वाली, मल को बांधने वाली होती है। यदि नीम का कुछ दिनों तक सेवन बराबर किया जाए तो मनुष्य की काम-शक्ति घटने लगती है।

नीम की छाल को घिसकर लगाने से फोड़े-फुंसी, घाव ठीक हो जाते हैं। चर्म रोगों में नीम की पत्ती पानी में उबालकर, उस पानी को छानकर नहाने से लाभ होता है। नीम की दन्तबन तो प्रसिद्ध दन्तमित्र है।

नीम की लकड़ी मकान वगैरह में दरवाजा, चौखट के लिए मजबूत मानी जाती है। ■

कहानी

उमेश पाण्डे

लिखावट और स्वास्थ्य

किसी भी व्यक्ति की लिखावट को देखकर उसके स्वास्थ्य की जानकारी हो सकती है। भारतीय ज्योतिष शास्त्रों से अधिक कार्य हस्ताक्षर विज्ञान में यूरोपियन ज्योतिष साहित्य को आधार बनाकर किया गया है।

भविष्य कथन की अनेकानेक विधियों में से एक है–'हस्ताक्षर विज्ञान' जिसके अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति विशेष के हस्ताक्षर के आधार पर न केवल उसके स्वभाव, भविष्यादि की जानकारी होती है बल्कि उसके स्वास्थ्य के संबंध में भी बहुत कुछ जाना जा सकता है। इस लेख की विषय वस्तु भी यही है अर्थात इस लेख में यह बताने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार किसी भी व्यक्ति की लिखावट को देखकर उसके स्वास्थ्य की जानकारी हो सकती है। पुनः भारतीय ज्योतिष शास्त्रों से अधिक कार्य हस्ताक्षर विज्ञान में यूरोपियन ज्योतिष साहित्य को आधार बनाकर लिखा गया है। इसी प्रकार यह विषय अत्यंत गूढ़ और वृहद् है। अतः उसमें से मात्र कुछ अत्यंत सरल तथ्यों को ही यहां लिखा जा रहा है–

● जिस व्यक्ति की लिखावट व्यवस्थित, समरूप वर्ण युक्त हो किन्तु वर्ण पृथक-पृथक हों, तो ऐसे व्यक्ति की इच्छाशक्ति उत्तम होती है उसका आत्मबल श्रेष्ठ होता है, वह साहसी एवं बुद्धिमान होता है। उसकी प्रजनन क्षमता उत्तम होती है वह परिश्रमी किन्तु मुख रोगी होता है।

● जिस व्यक्ति की लिखावट समरूप वर्णों से युक्त हो किन्तु विभिन्न अक्षर मिले हुए हो तो उस व्यक्ति से प्रायः मानसिक अस्थिरता होती है। न्यून रक्तचाप भी उसे होता है। इसके अलावा शिरोपीड़ा, नेत्र, रोग तथा केश एवं त्वचा संबंधी रोग उसे होते हैं।

● जिस व्यक्ति के शब्दों के अक्षर पृथक-पृथक हो तथा वे असमान हों वह चिड़चिड़ा, रक्तचाप पीड़ित, शिरोपीड़ा युक्त, मानसिक अस्थिरतावाला तथा क्रोधी होता है।

● मिले हुए तथा असमान अक्षरों वाली लिखावट वाले व्यक्ति को पैर में कष्ट, उच्च रक्तचाप एवं प्रबल मानसिक तनाव रहते हैं।

● पृथक-पृथक अक्षरों से युक्त एवं आगे की ओर झुके हुए हस्ताक्षरों वाला गुप्त रोगी, उदरकष्ट युक्त किन्तु विनम्र एवं अच्छे स्वभाव वाला होता है।

● पीछे की ओर झुके हुए एवं पृथक-पृथक अक्षरों वाली लिखावट वाला प्रायः आंत्र कष्ट से युक्त, अर्शरोगी, नेत्र पीड़ित तथा शुक्र पीड़ित रहता है।

● जिस व्यक्ति की लिखावट में अक्षर मिले हुए तथा आगे की तरफ झुके हुए होते हैं वह बुद्धिमान, प्रेमी किन्तु अस्थि एवं वातविकारी तथा उदर में कष्ट पाने वाला होता है।

● पीछे की तरफ झुके हुए तथा मिले हुए अक्षरों वाला जातक रिजर्व प्रकृति का, गले एवं पीठ में पीड़ा पाने वाला, वायु विकारी, आंत्र विकारी तथा मूत्र रोगी होता है।

● जो व्यक्ति लम्बे-लम्बे वर्ण युक्त लिखावट वाला होता है वह स्वभाव से मृदु किन्तु आलसी होता है। उसमें भेद विकार तिल्ली, जिगर के प्रायः कष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। प्रजनन तंत्र जनित कुछ पीड़ाएं भी उसे होती है।

● लिखते समय जो व्यक्ति शब्दों के बीच-बीच में असमान स्थान छोड़ता है वह रक्ताल्पता का रोगी अथवा न्यून रक्तचाप वाला, तिल्ली में कष्ट प्राप्त करने वाला, मूत्र विकारी तथा दंत एवं मुख ग्रह पीड़ित होता है इसके विपरीत लिखते समय जो व्यक्ति शब्दों के बीच समान स्थान छोड़ता है वह फुर्तीला, मानसिक रूप में सदैव प्रसन्न तथा एकाग्र रहने वाला किन्तु अल्प मूत्र विकारी होता है।

● जो व्यक्ति गहरे एवं गड़ाकर अक्षर लिखता है उसका हृदय पुष्ट होता है उसमें मानसिक स्थिरता होती है उसे निर्णय लेने की क्षमता उत्तम होती है किन्तु उसे उदर विकार होते है। इसके विपरीत बहुत हल्के हाथ से लिखने वाला अर्थात हल्के वर्णों की लिखावट वाला प्रायः रोग ग्रसित होता है, उसका हृदय कमजोर एवं रक्त विकारी होती है।

● जिस व्यक्ति की लिखावट में वर्णों का आकार बहुत छोटा होता है वह संकीर्ण मानसिकता वाला, त्वचा रोगी, कर्ण विकारों वाला, आंत्र में कष्ट पाने वाला तथा गुप्त रोगी होता है।

● जो व्यक्ति कंपित अक्षर लिखता है अर्थात जिसके अक्षर उबड़ खाबड़ होते हैं अथवा बहुत ज्यादा अनियमित होते है वह वात विकारी, उदर रोगी, पेशी तंत्र व्याधि ग्रसित किन्तु बुद्धिमान होता है।

● जिस व्यक्ति का लिखावट तिरछी कतारों में होती है उन्हें त्वचीय विकार, अल्प रक्तविकार, मूत्र विकार एवं श्वसन तंत्र में प्रायः कुछ न कुछ गड़बड़ियां चलती रहती है।

● जो व्यक्ति लिखते समय अक्षरों को नीचे से आगे तथा पीछे की ओर घुमा देता है वह गले का रोगी, कफ विकारी, त्वचा रोगी, प्रजनन तंत्र में विकार वाला तथा स्थिर मानसिकता वाला होता है।

और अंत में जो व्यक्ति आदतन अपने लेखन में एक ही वर्ण को अलग-अलग प्रकार से लिखता हो वह परम स्थिर, वाचाल, किडनी अथवा मूत्र विकारी जिगर अथवा अग्नाशय में अल्प विकारयुक्त एवं एसीडिटी का शिकार होता है।

इस प्रकार लिखावट के आधार पर किसी भी व्यक्ति के स्वास्थ्य की एक झलक प्राप्त की जा सकती है।

-319, महात्मा गांधी मार्ग, मल्हारगंज
इंदौर-452002 (म.प्र.)

कहानी

डॉ. विनोद सोमानी 'हंस'

प्रभावी संवाद सभी करें याद

शासन बिना अन्न व शस्त्रों के चल सकता है, पर जनता का विश्वास उठ जाए तो शासन चल नहीं सकता।

सफल व्यक्ति वह होता है जो हर परिस्थिति में तटस्थ रहता है और सही वक्त पर सही उत्तर देता है। विषम परिस्थितियों में वह डावांडोल नहीं होता है। उसका एक ही संवाद उसको सफल बना देता है। हमारे देश के ऋषि, मुनि, संत, महात्मा व सद्गुरु इसीलिए परमपूज्य बने हैं क्योंकि वे जिज्ञासुओं को उनके कठिन से कठिन प्रश्नों के उत्तर देने में सफल रहे। अनेक राजनेता, व्यवसायी व अन्य लोग भी अपने सटीक संवादों के कारण लोकप्रिय रहे।

एक परिवार गुरु चरणों में बैठा था। अनेक सत्संग चर्चाएं रही। अंत में परिवार का मुखिया बोला– ''गुरुवर, कृपा कर कभी इस गरीब सुदामा के घर भी पधारें।''

गुरु बोले– ''आप तो सुदामा हैं। तब तो हमें आपके चरण धोने पड़ेंगे।'' बात का गूढ़ मर्म समझ कर सारा परिवार शर्मिन्दा हो गया और ठहाका भी लग गया।

दो फैक्टरियों में साथ-साथ हड़ताल हो गई। वेतन वृद्धि का आंदोलन था। मजदूर नारे लगा रहे थे। एक फैक्टरी का मालिक बाहर आया और सबको सम्बोधित कर बोला–''आप न भूलें कि फैक्टरी बन्द होने से आपकी माली हालत ही बिगड़ेगी व तकलीफ भी बढ़ेगी। आपके परिवार के लोग भूखे मरेंगे क्योंकि फैक्टरी चलने से ही आपके परिवार का खर्च चलता है।''

यह वक्तव्य मजदूरों के आत्मसम्मान को ललकारने वाला था। फैक्टरी बन्द रही और मजदूर और जोरों से नारे लगाने लगे।

दूसरी फैक्टरी का मालिक बाहर आया और मजदूरों से बोला– 'भाइयों, आप सब मजदूरों के परिश्रम से ही मेरे घर का खर्च चलता है। आपकी समस्याओं से मैं वाकिफ हूं और मैं उन्हें कैसे भूल सकता हूं। मैं आपकी बातों पर जरूर ध्यान दूंगा।'' यह सुनकर मजदूर फैक्टरी में काम करने लगे। पहली बंद हो गई। दूसरे मालिक की सुमधुर बोलने की कला ने फैक्टरी को हानि से बचा लिया।

विश्व के महान संशोधक वैज्ञानिक थामस अल्वा एडिसन को कौन नहीं जानता। वे 84 वर्ष जीए। वे बारह वर्ष की अवस्था में ही बहरे हो गये थे। एक बार पत्रकार ने एक व्यक्तिगत प्रश्न पूछने की इच्छा प्रकट की। एडिसन ने हां भर दी।

पत्रकार–'बारह वर्ष की आयु में आप करीब-करीब बहरे हो गये थे। इसके बावजूद आपने यशस्वी जीवन जीया। यदि आप बहरे न होते तो और ऊंचाइयां छू सकते थे। क्या आपको ऐसा नहीं लगता?''

एडिसन बोले–''ना, मैं मेरे बहरेपन को श्राप नहीं वरदान मानता हूं।''

पत्रकार–''कैसे?'' उसे आश्चर्य हुआ।

एडिसन–''मित्र, इस बहरेपन से मुझे तीन तरह के लाभ मिले। प्रथम, लोगों की बेकार बातें सुननी नहीं पड़ती। शांति से काम कर पाता हूं। दूसरा लाभ जगत में जो कुछ बोला जाता है वह सब सुनने लायक नहीं होता। मैं उससे बच गया। तीसरा लाभ ऊंची आवाज में बोलने वाला कभी झूठ नहीं बोल सकता और मुझे सत्य सुनना ही प्रिय लगता है।'' पत्रकार निरूत्तर हो गया उनकी दो टूक बात से।

एक इंगलिश कवि कालरिज ने एक बार व्याख्याता चार्ल्स को पूछा– ''क्या आपने कभी मेरा धार्मिक प्रवचन सुना है?''

चार्ल्स ने उत्तर दिया– ''हां, मैंने प्रवचन के अलावा आपके मुखारबिन्द से कुछ सुना ही नहीं। अन्य विषयों पर भी क्या आप बोलते हैं?''

कवि कालरिज चुप हो गए।

सही संवाद आदमी का भूषण है। उससे उसकी महानता झलकती है। निसन्देह सही उत्तर सही समय पर देना हर किसी को नहीं आता।

कन्फ्यूशियस से एक शिष्य ने पूछा– ''गुरुदेव, प्रभावशाली शासन व्यवस्था की व्याख्या बताइए।''

उन्होंने मात्र तीन शब्दों में उत्तर दिया– ''अन्न, अस्त्र-शस्त्र और जनता का विश्वास।''

शिष्य– ''अगर किसी एक को छोड़ना पड़े तो!''

कन्फ्यूशियस– ''अस्त्र-शस्त्र को।''

शिष्य– ''यदि शेष में से एक को छोड़ना हो तो।''

वे बोले– ''अन्न का त्याग।''

शिष्य– ''जनता का विश्वास त्याग दें तो।''

वे बोले– ''याद रखो, शासन बिना अन्न व शस्त्रों के चल सकता है, पर जनता का विश्वास उठ जाए तो शासन चल नहीं सकता।''

इसी प्रकार इटली के राजा चार्ल्स के पास सुप्रसिद्ध कवि टोरक्वाटो बैठे थे। संवाद हो रहा था। राजा ने पूछा– ''दुनिया में जीवित सबसे खुश व्यक्ति कौन है?''

कवि– ''मेरे विचार से भगवान ही सबसे खुश व्यक्ति हैं।''

राजा– ''यह तो ठीक है पर, भगवान के बाद?''

कवि– ''राजन्, मैं समझता हूं भगवान के बाद वही व्यक्ति ज्यादा खुश है जो स्वयं भगवान जैसा बन जाता है अर्थात उसके जैसा गुणवान हो जाता है।''

यह जीवन संवादों के सहारे चल रहा है, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, साहित्यिक सभी क्षेत्रों में आप क्या सोचते हैं, क्या बोलते हैं इसी का महत्व है। आपकी सफलता इन्हीं संवादों में छिपी है। क्यों न हम भी पूर्ण संवाद करें ताकि सभी हमें चाहें, प्यार करे।

-42/43 जीवन विहार कॉलोनी,
आनासागर सरक्यूलर रोड,
अजमेर-305006 (राजस्थान)

जप के लिए 108 दानों की माला क्यों ?

● ज्योतिषाचार्य प्रवीण सोनी ●

माला के 108 दानों में सारी सृष्टि आ जाती है। इसलिए एक माला में 108 दानों को ही उचित माना गया है।

जप करना प्राचीनकाल से ही पूजा-पाठ का मुख्य हिस्सा रहा है। हमेशा जप के लिए एक माला को उपयुक्त माना गया है। यह माला रुद्राक्ष, मोतियों, वैयजंती, नगों आदि से बनी होनी चाहिए। इन सभी में से रुद्राक्ष की माला को ही सबसे उपयुक्त माना गया है। इस रुद्राक्ष की माला में भगवान शिव के आशीर्वाद के अलावा विद्युतीय, चुम्बकीय और कीटाणुनाशक शक्ति भी पायी जाती है। इस माला का महत्व बताते हुए यह कहा गया है कि बिना कुश के अनुष्ठान, बिना जल-संस्पर्श के दान तथा बिना माला के संख्याहीन जाप निष्फल होता है।

एक माला में १०८ दाने ही क्यों उपयुक्त

यही सवाल प्रत्येक व्यक्ति के मन में चलता रहता है कि माला में 108 दानें ही क्यों? इससे ज्यादा या इससे कम क्यों नहीं। चलिए इसके बारे में थोड़ा और जानने की कोशिश की जाए। 108 दानों की संख्या हमारी सांसों, नक्षत्रों, ग्रहों, दिनों, घंटों, सूर्य की कलाओं, राशियों आदि पर निर्धारित की गई है।

पहला सिद्धांत एक दिन में 24 घंटे होते हैं। 24 घंटों में एक व्यक्ति 21600 बार सांस लेता है। परन्तु 12 घंटे तो उसकी सामान्य दिनचर्या में निकल जाते हैं तो बाकी शेष 12 घंटे भगवान की आराधना के लिए बचते हैं। अर्थात् बाकी शेष 10800 सांसें भगवान का ध्यान करने के लिए बचती हैं। जिसमें से हर व्यक्ति सारा समय भगवान को दे, इतना समय तो किसी भी व्यक्ति के पास नहीं है और यह संभव भी नहीं है। आइए इसे और ध्यान से समझते हैं। 10800 में से अंतिम दो शून्य हटाकर शेष 108 श्वास ही प्रभु की आराधना के लिए समर्पित किया जाए और यह संभव भी है। यही है हमारा पहला सिद्धांत।

दूसरा सिद्धांत हमारे सूर्यदेव की गतिविधियों पर आधारित है। सालभर में सूर्य 216000 कलाएं बदलता है। सूर्य हर 6 महीने में उत्तरायण और दक्षिणायण रहता है तो इस प्रकार 6 महीने में सूर्य की कुल कलाएं 108000 होती है। अंतिम तीन शून्य हटाने पर 108 संख्या हमें मिलती है। जप में 108 दानें सूर्य की 108000 कलाओं पर निर्धारित है। इसका अर्थ माला का एक मोती या दाना सूर्य की 1000 कलाओं पर आधारित है।

तीसरा सिद्धांत ज्योतिषशास्त्र पर आधारित है। इसका अर्थ सारे ब्रह्मांड को 12 हिस्सों में बांटा गया है। इन 12 हिस्सों को राशि का नाम दिया गया है। हमारे शास्त्र में प्रमुख रूप से नौ ग्रह माने जाते हैं। 12 राशि और 9 ग्रह का गुणनफल 108 आता है। इसका मतलब इस संख्या में पूरी राशियां और ग्रह आ जाते हैं।

चौथा सिद्धांत नक्षत्रों पर आधारित है। हमारे ब्रह्मांड में 27 नक्षत्र है। प्रत्येक नक्षत्र के 4 चरण होते हैं। इनके गुणनफल की संख्या 108 आती है। 108 की संख्या पवित्र मानी जाती है। हमारे हिन्दू धर्म में 'श्री 108' जगद्गुरुओं, धर्माचार्यों के नाम के आगे लगाना अति उत्तम माना गया है जो सम्मान प्रदान करता है।

इस प्रकार 108 दानों में सारी सृष्टि आ जाती है। इसलिए इसका प्रयोग अर्थात् एक माला में 108 दानों को ही उचित माना गया है।

माला के प्रकार और उसकी श्रेष्ठता

एक सौ आठ, सौ-सौ, पचास दानों की माला उपलब्ध है। पर जप के प्रयोग के लिए 108 (एक सौ आठ) दानों की माला सर्वश्रेष्ठ होती है। 50 (पचास) दानों की मध्यम होती है। 100 (सौ-सौ) दानों की श्रेष्ठ होती है। ■

उदास होते हैं खुशी का ढोल पीटने वाले

● मिलान कुंदेरा ●

मिलान कुंदेरा का जन्म चेकोस्लोवाकिया में 1 अप्रैल 1929 को हुआ था। उन्होंने चेक में लिखना शुरू किया था लेकिन राजनीतिक मतभेदों के कारण उन्हें अपने देश से ही बेदखल होना पड़ा। बाद में उन्होंने फ्रांस में न सिर्फ शरण ली, बल्कि फ्रेंच में ही लिखने लगे। जोक और इम्मोरटलिटी उनके प्रमुख उपन्यास हैं।

- जब आप कोई बात दिल से कहते हैं तो दिमाग को ऐतराज करने में हिचक होती हैं।
- प्यार एक किस्म का इंतजार है, जब मिलता है तो लगता है अपने ही खो चुके अधूरे हिस्से को पाया हो।
- सत्ता में बैठे लोगों को भूलने की आदत होती है। उसके खिलाफ आदमी की लड़ाई इसीलिए भूल जाने की आदत के खिलाफ याद दिलाते रहने की जिद है।
- हमें अपने आनेवाले कल को यादों के बोझ से दबने से बचाते रहना चाहिए।
- शर्मिंदगी की सबसे बड़ी वजह यह नहीं कि हमने कोई गलती की है। वह उस अपमान से पैदा होती है, जो दूसरे करने से नहीं चूकते।
- उस जीवन का कोई मतलब नहीं जो जीवन कैसा हो इसकी रिहर्सल बन कर रह जाए।
- खुद को दरकिनार कर दिए जाने के लिए हम अक्सर दूसरों को कोसते हैं। सच यह है कि उसके जिम्मेदार हम खुद होते हैं।
- हमें अपनी उम्र का खयाल कुछ लम्हों में ही आता है, ज्यादातर वक्त हम उम्र से बाहर जीते हैं।
- एक ऐसी दुनिया में रहना जहां किसी को कोई माफी न मिले, नरक में बसर करने जैसा है। सबसे बचकाने लगने वाले सवाल ही सबसे संजीदा सवाल होते हैं।

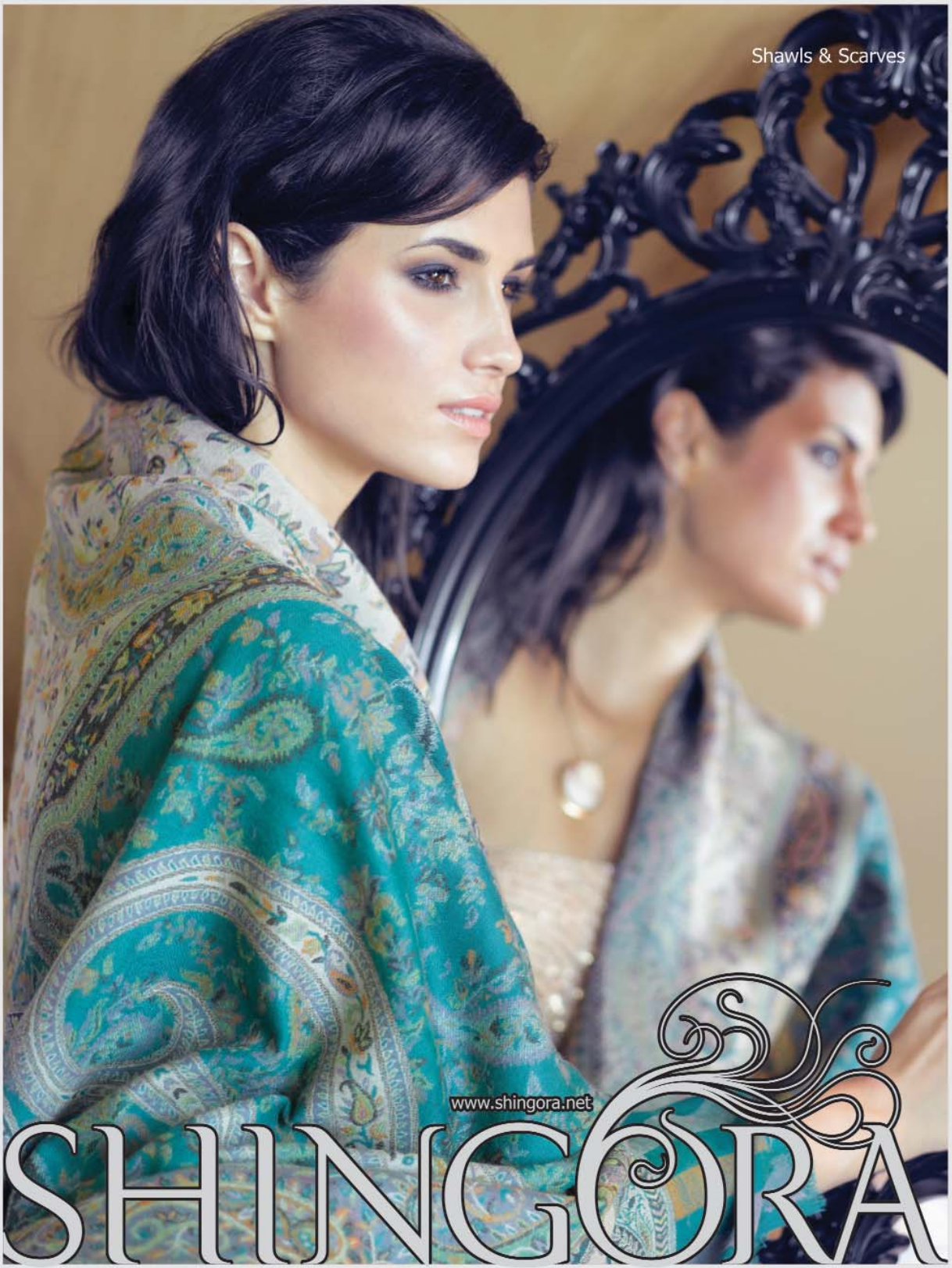

SHINGORA TEXTILES LIMITED (RETAIL UNIT):
544, National Road, Ludhiana-141001 Tel: 0161-2404728 Fax: 0161-2676497 Email:retail@shingora.net

पं. दयानंद शास्त्री

जीवन में बांसुरी की भूमिका

मनुष्य का जीवन प्रकृति और परमात्मा की एक महान सौगात है। जीवन को इस तरह जिया जाना चाहिए कि जीवन स्वयं वरदान बन जाए। मनुष्य का जीवन बांस की पोंगरी की तरह है। यदि जीवन में स्वर और अंगुलियों को साधने की कला आ जाए, तो बांस की पोंगरी भी बांसुरी बनकर संगीत के सुमधुर संसार का सृजन कर सकती है। भला जब किसी बांस ओर पोंगरी से संगीत पैदा किया जा सकता है, तो जीवन और माधुर्य और आनंद का संचार क्यों नहीं किया जा सकता है?

भारत में ध्वनि द्वारा घर तथा वातावरण को शुद्ध करने की परम्परा कई सदियों से चली आ रही है।

बांसुरी को शांति, शुभता एवं स्थिरता का प्रतीक माना जाता है। यह उन्नति, प्रगति एवं सकारात्मक गुणों की वृद्धि की सूचक भी होती है। फेंगशुई और हमारे शास्त्रों में शुभ वस्तुओं में बांसुरी का अत्यधिक महत्व है। फेंगशुई के उपायों का महत्व इसलिए भी अधिक है, क्योंकि वास्तुशास्त्र में जहां कहीं किसी दोष से पूर्णत: मुक्ति के लिए अशुभ पर्यावरण निर्माण कार्य को तोड़ना आवश्यक होता है, वहीं फेंगशुई में अशुभ निर्माण को तोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती है, अपितु पैगोडा, बांसुरी आदि सकारात्मक वस्तुओं का प्रयोग कर के उस दोष से मुक्ति पा लेते हैं।

बांसुरी का निर्माण बांस के ताने से होता है। सभी वनस्पतियों में बांस सबसे तेज गति से बढ़ने वाला पौधा होता है। इसी कारण से यह विकास का प्रतीक है और किसी भी वातावरण में यह अपना अस्तित्व बनाए रखने की क्षमता इसमें होती है। यदि किसी भी दूकान या व्यवसाय स्थल पर इसके पौधे को लगाया जाए तो जैसे बांस के पौधे की वृद्धि तेज गति से होगी। वैसे ही उस दूकान या व्यवसाय स्थल के मालिक की भी प्रगति होगी। बांस के पौधे के ये गुण बांसुरी में भी विद्यमान होते हैं।

वास्तु में बीम संबंधी दोष, द्वार वेध, वृक्ष वेध, वीथी वेध आदि सभी वेधों के निराकरण में और अशुभ निर्माण संबंधी वास्तु दोषों में बांसुरी का प्रयोग होता है। ग्रह दोषों के अंतर्गत शनि, राहु आदि पाप ग्रहों से संबंधित दोषों के निवारण में बांसुरी का कोई विपरीत प्रभाव नहीं होता है।

लेकिन बांसुरी के प्रयोग में एक सावधानी अवश्य रखनी चाहिए वह यह है कि जहां कहीं भी इसे लगाया जाए, वहां इसे बिल्कुल सीधा नहीं लगाकर थोड़ा तिरछा लगाना चाहिए तथा इसका मुंह नीचे की तरफ होना चाहिए।

जापान, चीन, हांगकांग, मलेशिया और मध्य एशिया में इसका प्रयोग बहुतायात में किया जाता है। यदि किसी के विकास में अनेक प्रयास करने के बाद भी बाधाएं उत्पन्न हो रही हो तो इस बांसुरी का प्रयोग अवश्य ही करना चाहिए। वैसे तो बांसुरी एक फायदे अनेक हैं।

> **यदि बांसुरी को घर के मुख हाल में या प्रवेश द्वार पर तलवार की तरह 'क्रॉस' के रूप में लगाया जाए तो आकस्मिक समस्याओं से छुटकारा मिलता है।**

बांसुरी के संबंध में एक धार्मिक मान्यता है कि जब बांसुरी को हाथ में लेकर हिलाया जाता है तो बुरी आत्माएं दूर हो जाती है और जब इसे बजाया जाता है तो ऐसी मान्यता है कि घरों में शुभ चुम्बकीय प्रवाह का प्रवेश होता है।

इस प्रकार बांसुरी प्रकृति का एक अनुपम वरदान है। जहां रत्न धारण, रुद्राक्ष, यंत्र, हवन आदि श्रमसाध्य और खर्चीले उपाय है, वहीं बांसुरी का प्रयोग सस्ता, सुगम और प्रभावी होता है, अपनी आवश्यकतानुसार के अनुसार इसका प्रयोग करके लाभ उठाया जा सकता है।

● बांसुरी बांस के पौधे से निर्मित होने के कारण शीघ्र उन्नतिदायक प्रभाव रखती है। अत: जिन व्यक्तियों को जीवन में पर्याप्त सफलता प्राप्त नहीं हो पा रही हो अथवा शिक्षा, व्यवसाय या नौकरी में बाधा आ रही हो तो उसे अपने बेडरूम के दरवाजे पर दो बांसुरियों को लगाना चाहिए।

● यदि घर में बहुत ही अधिक वास्तु दोष है या दो या तीन दरवाजे एक सीध में है तो घर के मुख्यद्वार के ऊपर दो बांसुरी लगाने से लाभ मिलता है तथा वास्तुदोष धीरे-धीरे समाप्त होने लगता है।

● यदि आप आध्यात्मिक रूप से उन्नति चाहते हैं या फिर किसी प्रकार की साधना में सफलता चाहते है तो अपने पूजा घर के दरवाजे पर भी बांसुरिया लगाए शीघ्र ही सफलता प्राप्त होगी।

● बेडरूम में पलंग के ऊपर अथवा डाइनिंग टेबल के ऊपर बीम हो तो इसका अत्यंत खराब प्रभाव पड़ता है। इस दोष को दूर करने के लिए बीम के दोनों ओर एक-एक बांसुरी लाल फीते में बांध कर लगानी चाहिए। साथ ही यह भी ध्यान रखे कि बांसुरी को लगाते समय बांसुरी का मुंह नीचे की ओर होना चाहिए।

● यदि बांसुरी को घर के मुख हाल में या प्रवेश द्वार पर तलवार की तरह 'क्रॉस' के रूप में लगाया जाए तो आकस्मिक समस्याओं से छुटकारा मिलता है।

● घर के सदस्य यदि बीमार अधिक हों अथवा अकाल मृत्यु का भय या अन्य कोई स्वास्थ्य से संबंधित समस्या हो तो प्रत्येक कमरें के बाहर और बीमार व्यक्ति के सिरहाने बांसुरी का प्रयोग करना चाहिए इससे अति शीघ्र लाभ प्राप्त होने लगेगा।

● यदि किसी व्यक्ति की जन्मकुण्डली में शनि सातवें भाव में अशुभ स्थिति में होकर विवाह में देर करवा रहे हो अथवा शनि की साढ़ेसाती या ढैय्या चल रही हो तो एक बांसुरी में चीनी या बूरा भरकार किसी निर्जन स्थान में दबा देना लाभदायक होता है इससे इस दोष से मुक्ति मिलती है।

● यदि मानसिक चिंता अधिक होती हो अथवा पति-पत्नी दोनों के बीच झगड़ा रहता हो तो सोते समय सिरहाने के नीचे बांसुरी रखनी चाहिए।

● यदि आप एक बांसुरी को गुरु पुष्य योग में शुभ मुहूर्त में पूजन कर के अपने गल्ले में स्थापित करते है तो इसके कारण आपके कार्य व्यवसाय में बढ़ोतरी होगी और धन आगमन के अवसर प्राप्त होंगे।

● पाश्चात्य देशों में इसे घरों में तलवार की तरह से भी लटकाया जाता है। इसके प्रभाव स्वरूप अनिष्ट एवं अशुभ आत्माओं एवं बुरे व्यक्तियों से घर की रक्षा होती है।

● घर और अपने परिवार की सुख, समृद्धि और सुरक्षा के लिए एक बांसुरी लेकर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के दिन रात बारह बजे के बाद भगवान श्रीकृष्ण के हाथों में सुसज्जित कर दे तो इसके प्रभाव से पूरे वर्ष आपकी और आपके परिवार की रक्षा तो होगी ही तथा सभी कष्ट व बाधाएं भी दूर होती जाएगी।

–विनायक वास्तु एस्ट्रो शोध संस्थान पुराने पावर हाउस के पास, कसेरा बाजार झालारापाटन सिटी-326023 (राजस्थान)

भक्ति विचार विष्णु महाराज

माता-पिता हमारे सर्वप्रथम गुरु हैं

शास्त्र कहते हैं कि गुरु वह है जो हमें अंधेरे से उजाले की ओर ले जाएं। जो हमें रोशनी प्रदान करे। तो सबसे पहले ऐसा कौन करता है? सबसे पहले यह रोशनी हमें मां दिखाती है। उसके बाद पिता। वही हमारे प्रथम गुरु हैं। इसीलिए शास्त्रों में यह भी लिखा है कि माता-पिता का यथायोग्य सम्मान करना चाहिए। जरा सोचो कि अगर हमें हमारे माता-पिता द्वारा कुछ भी सिखाया न जाता तो हमारी क्या स्थिति होती। क्या हम ढंग से चल पाते, बात कर पाते, लिख पाते, व्यवसाय कर पाते! यहां तक कि हम अपने जीवन और इस शरीर की रक्षा कैसे करना है, यह भी नहीं जान पाते। मान-अपमान, प्यार और अहंकार जैसी मूल वृत्तियों को पहचानना भी हमें वही सिखाते हैं।

लेकिन जब हम यौवन और सामर्थ्य प्राप्त कर लेते हैं, तब अपने उन्हीं माता-पिता को हम तिरस्कार की निगाहों से देखते हैं। कई महानुभाव तो यह भी सोचते हैं कि अब हमें इनकी क्या आवश्यकता है। बूढ़े माता-पिता यदि किसी कारणवश अस्वस्थ हो जाएं तो वे हमें बोझ लगने लगते हैं। तब हमें यह बात याद भी नहीं रहती कि बचपन में हमारे बीमार होने पर कैसे वे रात-रात जागकर माथे पर पट्टी करते थे।

आजकल बहुत सारे गुरु और सद्गुरु हो गए हैं। उन्होंने माता-पिता की गुरुता की ओर से हमारा ध्यान हटा दिया है। हम माता-पिता के ही चरणों में बैठे रहेंगे तो उनकी कीर्ति कैसे फैलेगी। इसलिए वे परमात्मा से मिलाने और जीवन का सच्चा ज्ञान दिलाने वाले सद्गुरु का महत्व बता कर असल में अपने महत्व की ओर ध्यान खींचने की कोशिश करते हैं।

यहां पर यह मत समझो कि हमें जीवित रखना हमारे माता-पिता का अपना स्वार्थ था, उनकी मजबूरी थी। नहीं, यह उनका प्रेम था हमारे प्रति। जैसे उनके माता-पिता ने उन्हें प्रेम किया था, वैसे ही वे हम पर प्रेम उड़ेलते हैं। तो यह दूसरे गुरुओं के लिए भी एक सीख है, उदाहरण है, जो सच्चा गुरु है वह भी अपने शिष्य को संतान के ही समान प्यार करता है, उसे जीवन की रोशनी दिखाने के लिए उसी तरह रात-दिन सिरहाने बैठा रह सकता है। लेकिन इधर हमने भी पाश्चात्य संस्कृति की हवा खा ली है

और गुरुओं ने भी। इसलिए आजकल जगह-जगह पर अनेक प्रकार के गुरुओं-सद्गुरुओं के आश्रम खुल गए हैं और दूसरी ओर वृद्धाश्रमों की भरमार हो गई है।

एक कहानी है जो हम सब ने सुन रखी होगी- श्रवण कुमार की। वे अपने बूढ़े माता-पिता (जो अंधे थे, चलने में सक्षम नहीं थे) को उठाकर तीर्थ यात्रा पर ले गए थे, उनकी इच्छानुसार। मार्ग में एक जगह जब माता-पिता ने जल पीने की इच्छा व्यक्त की तो वह जल भरने के लिए गए, जहां पर दशरथ महाराज के तीर से उसकी मृत्यु हो गई। श्रवण कुमार के पिता के श्राप की वजह से दशरथ को भी पुत्र का वियोग सहना पड़ा और उसी के विरह में तड़पते हुए वे भगवत धाम को गए। भगवान प्रसन्न होते हैं आपसे, अगर आप अपने माता-पिता की बात मानें, उनकी सेवा करें। भगवान को सबका पिता कहा गया है। लेकिन अगर आप जागतिक माता-पिता को प्रसन्न नहीं कर पायेंगे तो आध्यात्मिक पिता अर्थात् भगवान को कैसे प्रसन्न कर पायेंगे? यदि आप माता-पिता को प्रसन्न नहीं कर पाते तो कोई गुरु-सद्गुरु आपको सन्मार्ग पर नहीं ले जा सकता। अगर वे प्रसन्न नहीं हैं तो भगवान भी प्रसन्न नहीं होंगे।

धर्मराज युधिष्ठिर ने महाभारत के युद्ध से पहले विपक्ष में खड़े अपने सभी सम्माननीय जनों को प्रणाम कर उनसे आशीर्वाद लिया था। भगवान राम ने भी वनवास पर जाने से पहले माता कैकयी, माता सुमित्रा, माता कौशल्या से आशीर्वाद लिया था। लेकिन माता-पिता का आशीर्वाद तभी फलता है, जब उसे पूर्ण श्रद्धा से लिया जाए। ढोंग से कुछ नहीं होगा, बात बिगड़ेगी ही। स्मरण रखिए पुत्र कुपुत्र हो सकता है, किन्तु माता-पिता कुमाता-कुपिता नहीं हो सकते। ■

फायदेमंद खुराक

● आंवला सभी रोगों का इलाज है। आंवले के सेवन से आश्चर्यजनक स्फूर्ति व शक्ति मिलती है। यह याददाश्त बढ़ाता है। एक चम्मच पिसा आंवला रात को पानी या दूध से लें। यह कब्ज को दूर करता है। इसमें भी फायदेमंद विटामिन सी होता है।

● प्रतिदिन एक संतरा खाने से चेहरे पर झुर्रियां नहीं पड़ती हैं। उसमें भी विटामिन सी होता है। विटामिन सी त्वचा को कमनीय बनाए रखने में भी मदद करता है। यह त्वरित ऊर्जा देने में भी सहायक होता है।

● लौंग को दांतों में दर्द होने पर उस जगह पर रखें। दर्द कुछ ही देर में भाग जाएगा।

● रोजाना गूजबेरी का सेवन करने पर महिलाओं को पीरियड्स के दौरान होने वाले दर्द से काफी राहत मिलती है।

● अगर आप यूरिनरी इंफेक्शन से परेशान हैं, तो एक गिलास पानी में एक चुटकी इलायची पाउडर मिलाकर रोजाना पिएं।

● खीरे को सलाद या सब्जी दोनों रूप में खा सकते हैं। इसके नियमित सेवन से शरीर में पानी की कमी नहीं होती है।

-पुखराज सेठिया

SURRENDER AND LOVE ARE SYNONYMOUS

Sri Sri Ravishankar

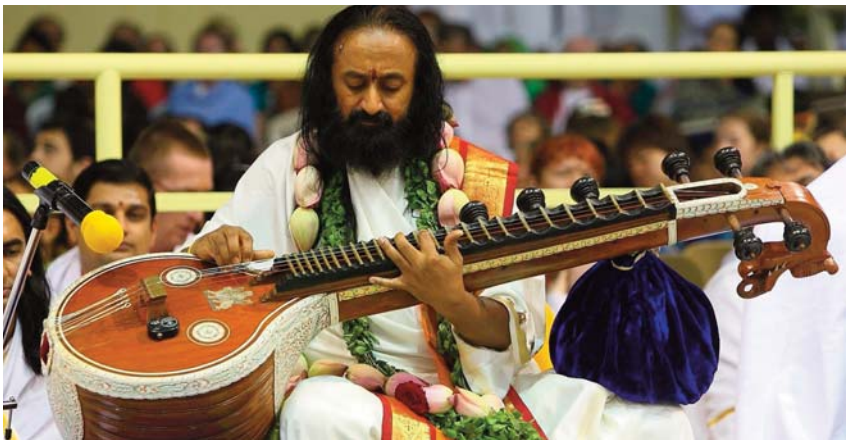

How can we experience infinity? It is possible only through love. Love is the only thing you cannot think about, if you think about it, it ceases to be love. When thinking stops, love begins. Lovers talk very silly things, so they are not thinking.

They say same things over and over again a thousand times, which a thoughtful person would not. With whosoever we fall in love with should know, we are really falling in love with ourselves. The truth is that we do not realise it because we are all the time caught up in the name and form; love is formless. Name and forms can be a way to begin the process of being in love. It can kindle love in you; but then it takes you beyond the name and form to the true nature, which is pure energy.

Whomsoever you love, you have surrendered. Your entire consciousness, your whole mind, heart, everything becomes so supple! Surrender is nothing but the delicate and supple level of your consciousness. It's not a doing; it's a state of being when the mind is free of doubts and troubles.

This word 'surrender' is very frightening because we have heard it in one context; when an army loses, it surrenders – a defeat is understood to be surrender, is it not so? It is not submission. Only the brave can surrender, or the knowledgeable and the wise can surrender.

What is the meaning of surrender? It is realising that, anywhere, everything belongs to the divine already. "I" am not in control – that is surrender. This little mind realises that it is not in control; the entire universe runs on its own and it does not matter whether you exist on this planet or not, things will happen.

Same way, you realise, that your life is a happening and you are a happening in this ocean of consciousness; your heart beats by itself and you are not making it beat; your breath moves by itself; sleep comes, you feel good and bad; all this phenomenon is happening in your life. And with this realisation comes a deep relaxation, a feeling of trust and being at home; that is surrender. Your practices can help and little intellectual understanding will help you to drop other ideas and concepts.

What are you afraid of? What do you think you will lose? Just wake up and see you have nothing to lose in the first place. And even if you think you have something, then how long can you hold on to? People part with their belongings to their near and dear ones because they cannot take it with them.

Why is there so much fear about surrender; you think you will lose something? I tell you, you will gain in the kingdom of world and heaven. Surrender is not an act; just relax in peace and you are surrendered. All the moments when you feel very happy, calm, pleasant, joyful; knowingly, unknowingly you are in the state of surrender. And those moments when you feel still, rigid, unpleasant, unhappy, fearful, you are not in the state of surrender. ■

Instruments of Peace

Dadi Janki

In my early morning meditations, i can hear the call of the world for peace - not just for an end to conflict, but for a deep, inner stillness and calm, which we remember as our original state.

To find peace, first we must teach ourselves to become quiet; only then we can become peaceful. Becoming peaceful means to seize the reins of mind and bring runaway thoughts to a halt. Once we have the mind's attention, we can begin to coax it to take us into silence, a true silence; not the place without sound, but the place in which we experience a deep sense of peace and a pervasive awareness of our well-being.

To move into this state of profound silence, we must train the intellect to create pure, good thoughts and to concentrate. Our wasteful thoughts burden us. Our habits of creating too many thoughts and words exhaust the intellect. We must ask, "How can i cultivate the habit of pure thought?"

Who is it that yearns to go into silence? It is i, the inner being, the soul. As i detach from my body and from bodily things, and turn away from the distractions of the world, i can face inwards to the inner being. Like a perfectly calm lake when all whispers of wind have stopped, the inner being shimmers, quietly reflecting the intrinsic qualities of the soul. Feelings of peace and well-being steal across my mind and, with them, thoughts of benevolence.

I let go of all thoughts of discontentment and am reminded of my oldest, most intrinsic state of being. I remember this inner calm. Though i have not been here recently, i remember it as my most fundamental awareness, and a feeling of happiness and contentment wells up inside of me. In this state i know every soul to be my friend. I am my own friend. I am deeply quiet. I am silent and utterly at peace.

This deep well of peace is the original state of the soul. When i am in this state, i feel the flow of love for humanity and i feel a state more elevated than what i would normally call happiness, a state of bliss. It is when i attain this state that something truly miraculous can happen. When i am in this state of complete soul-conscious rest, i become aware that energy is beginning to flow into me. I feel strength and a power so expansive, that in this moment i know there is nothing i cannot do, nowhere i cannot reach.

When this happens, i am experiencing the connection with the divine energy and the flow of God's power into my inner being. If i stay focussed inwards, connected with this stream of divine power, even the way i use the physical senses will be different. When i look at the world, i will see through my original nature of benevolence and experience compassion for the world.

It is this power that transforms me inside, making me pure and powerful. When the soul and God are linked together, there is a power that reaches me and invisibly across to others, bringing about transformation in them, in nature, and in the world.

The secret of this power of silence is that i don't have to do the work of transformation. Divine power automatically transforms. Let me do the inner work. Let me go deeply into that experience of the original state of the self, and let there be silence so that God is able to do His work through me, His instrument. ■

What you see or don't see

Sri Sri Anandamurti

What is this? "It is a flower." How could you say that it is a flower? Because particular light waves come and touch your eyes, and the flower is created in your mind. You are not seeing the flower; you are seeing the mental image of the flower. You don't see or hear anything, you don't even touch anything. When you see or touch something, corresponding sympathetic vibration is created in your mind. At that time, you feel that you are seeing the flower, or you feel that you are hearing a song, or touching something hot or cold.

You never come in physical contact with anything. Your contact with everything is through your mind, through your nerve fibres, nerve cells, and your entire objective mind. When you feel you see, it is an internal projection with the help of your nerves. It is a mystery that whatever you perceive or whatever you conceive - everything is within you, nothing is outside of you. Hence it is said that the entire universe is within you in miniature form. You are seeing the psychic projection of the material world, which is why i say that the human entity is more psychic than physical.

Your existence is more important in the psychic world than in the physical world. Human approaches are of two kinds - extro-internal and intro-external. Here is a flower. The waves move from the external world to the eye, then through the optic nerve to the nerve cells and finally to the brain. There, a similar flower is created according to the light waves that are outside your body. This movement is from external to internal. It is something external, and its creation is in your mind, that is external to internal. Extro-internal - created outside but going within.

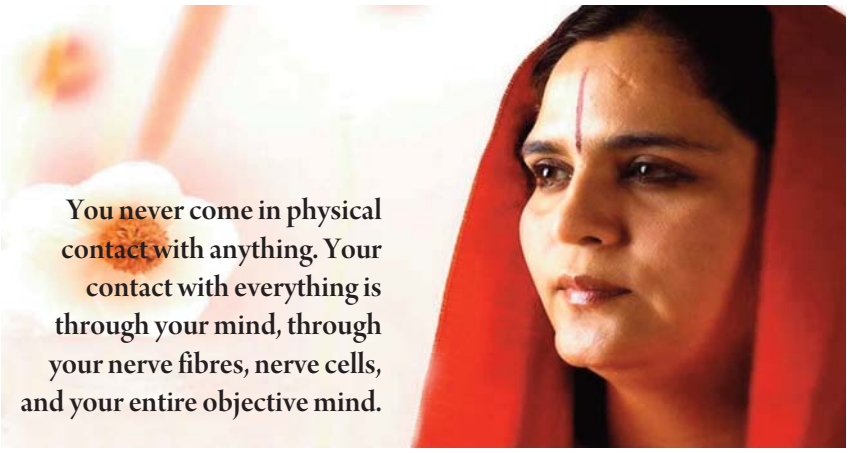

There may also be intro-external movement, created in the mind and sent outside. Suppose you have created an elephant in your mind, and you have got a strong ectoplasmic structure. You create sympathetic vibrations outside. That external projection can be seen by you and by others. In your mind, you are creating an ectoplasmic elephant, and that elephant is projected outside. Others may see it. In psychology, it is called a "positive hallucination".

Similarly, suppose there is an external elephant, and with the help of your ectoplasmic power, you withdraw the light waves emanating from the external elephant. Everyone will see there is no elephant, although actually there is an elephant. This is called a "negative hallucination". Positive hallucination means that what appears to exist does not exist, and negative hallucination means that what actually exists appears not to exist.

Now, for you there are two worlds, the external and the internal. Waves from the outside enter the internal world, and ectoplasmic waves with a strong pressure may create strong extroversial waves. In order to create positive or negative hallucinations, there is always extroversial projection of your thought-waves.

Parama Purusha means He who, with His ectoplasmic force, is creating everything. When a man has got devotion, he may or may not be a scientist, but he may unify his existence with Parama Purusha because of his extreme love for the Divine. Then he has no separate identity. ■

FORGIVENESS IS DIVINE

Gani Rajendra Vijay

Whenever we get angry we become weak. We must adopt forgiveness if we want to expand our capabilities and tolerance levels. It is a common misconception that if we surrender before others, we are weak; if we agree to what others say and don't oppose them, we are unintelligent. Nothing can be further from the truth. Peaceful thinking increases our capabilities. Anger and agitation do not elevate our lives but degrade.

In spite of discipline and self-control, desires dominate and overpower us all the time. If we carry bitterness for others in our minds, how can we expect love and warmth from them in return?

An enemy is a person who nurtures enmity within himself. Nobody is a friend or a foe to begin with. If we have good feelings for others they become our friends, and if we nurture bitterness towards them they may not turn into our enemies but we will definitely become our own foe.

A man abused Buddha for half an hour but he did not utter a word. Kamath troubled Parshvanath for many days but he did not retaliate. Such is the forgiveness of saints! If someone harbours ill will against us, he will be silenced by our demeanour. Our calmness will wipe away his bitterness.

There is a story about two friends who were very affectionate towards each other. One of them ran away from home while the other went to study in another city. The latter completed his studies and later came to know that his friend had become a dacoit. One day he went to the forest and came across a horse rider.

He immediately recognised his old friend who had now become a dacoit. The rider too recognised him. Having recognised his dacoit friend he said, "Brother, I want to speak to you." The rider replied, "Step aside, If you talk, I will mutilate your tongue." With this he moved away.

They met again in the same forest. This time the learned man said, "You told me that you will slit my tongue if I say something. All right then, take my life but I must say what I want to. It pains me to see you as a dacoit." This time the dacoit did not speak. He got down from his horse, bent his head and walked away. The learned man reflected, "Perhaps there are still some faults in me because of which he is ignoring what I say."

In the third meeting, the learned man did not say a word and just embraced his dacoit friend and burst into tears, voicing his pain. The dacoit touched his friend's feet and said, "It's all over now. Today, I have realised that my negative actions can give pain and suffering to others. From now on I will no longer indulge in any crime." ■

डॉ. उषा अरोड़ा

जन-जन की आस्था का केन्द्र
छोटी देवकाली

इतिहासकार कनिंघम लिखता है– 'छोटी देवकाली' मंदिर अयोध्या की जनता के लिए अत्यंत आदर और सम्मान की वस्तु है। औरंगजेब के आक्रमण के समय इसकी रक्षा करते हुए दस हजार हिन्दू मारे गए। कई बार यह गिरा फिर बन गया। गौरवशाली मंदिरों में से एक विशिष्ट मंदिर माना जाता है और है भी। यद्यपि यह बहुत छोटा है किन्तु इसके गौरव और सम्मान में अब भी कोई कमी नहीं है। हिन्दुओं की यह मान्यता है कि यहां लगातार छह महीने नित्य दर्शन करने से सब इच्छाएं पूर्ण हो जाती हैं।

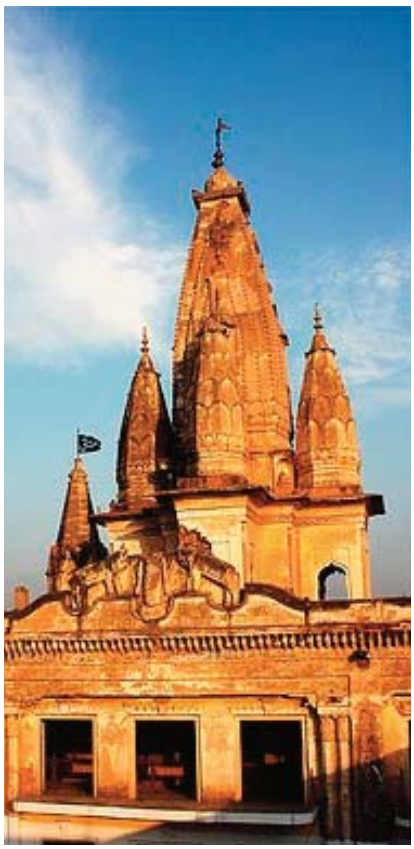

मां की महिमा और उसकी भव्यता का गुणगान करता श्री छोटी देवकाली का मंदिर अयोध्या में स्थित है। श्री छोटी देवकाली अयोध्या की ग्राम देवी मानी जाती है। अत्रि संहिता मिथिला खंड में वर्णन है कि अयोध्या की छोटी देवकाली मिथिला धाम की वही पार्वतीजी हैं जिनका पूजन सीताजी नित्य करती थीं। विवाह के बाद विदाई के समय जब सीताजी अयोध्या के लिए चलीं तो पार्वती की प्रतिमा साथ लेती आईं।

अयोध्या पहुंचने पर राजा जनक को विदित हुआ तो उन्होंने कनक भवन के पार्श्व भाग में स्थित सप्तसागर के ईशानकोण पर पार्वतीजी का मंदिर बनवा दिया। राजा ने अपनी रानियों और पटरानियों सहित मां पार्वती का पूजन किया और ग्राम देवी का पद प्रदान किया। रामचरितमानस में कहा है–

पूजी ग्राम देवी सुर लागा,
कलो वहोरि देन बलिभागा।

सीताजी अपनी सहेलियों के साथ कनक भवन से निकलकर सप्तसागर में स्नान कर ग्राम देवी श्री छोटी देवकाली का पूजन कर पुनः भवन लौट आती थीं। त्रेता, द्वापर के बाद कलियुग में ईसा की तीसरी शताब्दी तक यह विशाल मंदिर अपनी उन्नति के चरम शिखर पर था। बौद्धों के अंतिम राजा बृहद्रय के समय हूण नरेश ने आक्रमण किया तब अयोध्या के तीन हजार मंदिर नष्ट हुए और उसमें यह मंदिर भी गिरा दिया गया। तब महाराजा पुष्यमित्र ने इसका पुनः निर्माण कराया। दूसरी बार मुगलों द्वारा यह मंदिर ध्वस्त किया गया। बिन्दु सम्प्रदायाचार्य श्री स्वामी राम प्रसादजी महाराज ने इस भव्य मंदिर पर एक छोटी-सी कोठारी का निर्माण कराया। उसी समय से यह स्थान आज भी श्री छोटी देवकाली के नाम से प्रसिद्ध है।

इतिहासकार कनिंघम लिखता है- 'छोटी देवकाली' मंदिर अयोध्या की जनता के लिए अत्यंत आदर और सम्मान की वस्तु है। औरंगजेब के आक्रमण के समय इसकी रक्षा करते हुए दस हजार हिन्दू मारे गए। कई बार यह गिरा फिर बन गया। गौरवशाली मंदिरों में से एक विशिष्ट मंदिर माना जाता है और है भी, यद्यपि यह बहुत छोटा है किन्तु इसके गौरव और सम्मान में अब भी कोई कमी नहीं है। हिन्दुओं की यह मान्यता है कि यहां लगातार छह महीने नित्य दर्शन करने से सब इच्छाएं पूर्ण हो जाती हैं। दी हिस्ट्री ऑफ इंडिया पृ.-672, अंग्रेज लेखक हैमिल्टन ने लिखा है "इस मंदिर को अयोध्या की महारानी सीताजी ने बनवाया था। इसकी प्रतिमा वह अपने मैके से अपने साथ लायी थी और नित्य आकर इस मंदिर में देवी की पूजा करती थी। शादियां होने पर वर-वधू आकर इस मंदिर में देवी का दर्शन करते हैं। मनोरथ पूर्ति एवं चिर सौभाग्य के लिए यहां हिन्दुओं की भीड़ लगी रहती है।"

वाकिंग ऑफ दी वर्ल्ड, पृ.-476, हिन्दुओं के हृदय में मां देवकाली के प्रति कितनी श्रद्धा रही है इसका उल्लेख इतिहासकार अल्बरूनी ने लिखा है कि शेरशाह सूरी ने जब अयोध्या पर आक्रमण किया तो मुट्ठीभर जाबांज हिन्दुओं ने शाही सेना को परास्त कर श्री देवकालीजी के मंदिर को पुनः नष्ट होने से बचा लिया। इतिहास की यह अद्भुत घटना है।

चीनी यात्री ह्वेनसांग एवं फाहियान ने भी अपने यात्रा संस्मरणों में इस मंदिर की प्रतिष्ठा, वैभव और महत्ता पर प्रकाश डाला है।

पौराणिक दृष्टि से भी इसका महत्व कम नहीं है। स्कंद पुराण के तीर्थ खण्ड में जहां अयोध्या वर्णन आया है वहां छोटी देवकाली का विशद वर्णन भगवान व्यासदेवजी ने अपनी अमर वाणी में किया है। सीतादेवी का मनोरथ पूर्ण करने वाली श्री देवकालीजी समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करती है।

अयोध्या के जन-जन में इस मंदिर के प्रति अपार श्रद्धा है। हजारों वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी वही प्रथा कि अयोध्या में जितने विवाह होते हैं सबका मौरी विसर्जन सप्तसागर में और वर-वधू छोटी देवकाली का दर्शन कर आशीर्वाद प्राप्त करते हैं और वहां कड़ाही चढ़ाते हैं।

देवी के उत्सव में पारम्परिक उत्सव प्रमुख हैं। बसंत पंचमी, चैत्र नवरात्रे, जानकी महोत्सव, आषाढ नवरात्रे, आश्विन नवरात्रे बड़ी धूम-धाम से मनाये जाते हैं। भण्डारा होता है, मेला लगता है, श्रद्धालुओं की अपार भीड़ मां के दरबार में दर्शन के लिए उमड़ी रहती है।

सन् 1926 में पं. लल्लन धर द्विवेदीजी ने मित्रों के सहयोग से 101 बत्ती की आरती का कार्यक्रम शुरू किया। सन् 1935 में श्री देवकाली समाज समिति का गठन हुआ। मंदिर के जीर्णोद्धार और नवरात्र में एक हजार इक्यावन बत्ती की आरती का कार्यक्रम शुरू हुआ। आरती के समय मां की भव्य प्रतिमा बोलती सी लगती है। मस्तिष्क मां के चरणों में झुक जाता है। मन शांत और स्तब्ध हो जाता है। मंदिर की दीवार पर बने रंगीन चित्र भी आकर्षक हैं। मां के दर्शन एक बार करने के बाद मन पुनः दर्शन के लिए आतुर हो उठता है।

–कन्हैया सदन, खत्रीपाड़ा, अतरौली
अलीगढ़ - 202280 (उत्तर प्रदेश)

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

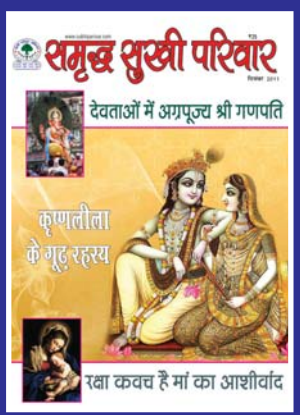

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन–जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई–मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट **सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली** के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए **IFS CODE UTIB0000119** का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

ई–253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली–110092

फोन: +91–11–26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

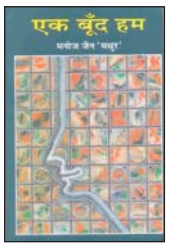

एक बूंद हम

डॉ. साधना बलवटे

समय जब सृष्टि की आंखों में काजल की रेखा खींचता है तब एक अश्रुकण उसकी पलकों में बंद हो जाता है और जब सुबह की किरणें रात की पलकों पर दस्तक देती हैं और वही अश्रुकण ओस की बूंद बन सृष्टि के अंक में किलकारियां लेने लगता है, मनोज जैन 'मधुर' की यह एक बूंद किलकारी आज हमारे हाथों में है। लेखक रस, छंद, अलंकार, भाषा और शैली के पंचामृत से भावों को इतना सुंदर अभिषेक किया है कि उनके यश छत्र में मां सरस्वती का वरदहस्त सहज ही उपस्थित जान पड़ता है। षडरिपुओं का दमन करते हुए जीवन निर्वहन करना मनुष्य का ध्येय है। इस ध्येय की प्राप्ति के लिए मानव विभिन्न मार्ग अपनाता है। लेखक ने अपने ध्येय की प्राप्ति का माध्यम अपने गीतों को बनाया है। पुस्तक के आवरण पृष्ठ पर बने पृष्ठ पर बने षट्कोण संभवत: इसी बात की ओर इंगित करते हैं। लेखक के गीत भावों का सहज प्रसव है शब्दों की शल्यक्रिया नहीं। क्योंकि जब भाषा का सहज प्रसव है शब्दों की शल्यक्रिया नहीं। क्योंकि जब भाषा अपने सामर्थ्य और शक्ति का प्रदर्शन करती है तो काव्य नीरस और दुरूह हो जाता है।

'एक बूंद हम' के गीतों में भाषा अपने पूर्ण सामर्थ्य के साथ सौन्दर्य और रोचकता को लेकर उपस्थित हुई है। हमारे यहां संस्कार घुट्टी में पिलाए जाते हैं। मनोज में छन्दों का जन्म उनकी श्वासों के साथ ही हो गया था। गीत-संगीत के संस्कार उन्होंने अपने पिताजी से बाल अवस्था में ही प्राप्त कर लिए थे। इसलिए गीतों की गेयता और छंद्रों की कसौटी पर लेखक के गीत खरे उतरते हैं। गीत स्वप्नदर्शी होने की बात करते हैं तो उसे पूर्ण करने को प्रेरित भी करते हैं। लेखक के गीतों का प्रेरणातत्व जीवन से विमुख व्यक्ति में भी जिजीविषा उत्पन्न करने की क्षमता रखता है। गीत, संगीत, नृत्य, कविता या कोई भी कला हो सृजन से जुड़े प्रत्येक साधक का अपना एक संसार होता है और अपने इस संसार का त्रिदेव वह स्वयं है। सारे रिश्ते, नाते, मित्र छोड़ भी जाएं, किन्तु सृजन की रचनात्मकता जीवन में कभी नीरसता एवं एकाकीपन का दंश मारने नहीं देती। जीवन का गहरा तथ्य लेखक एक ही पंक्ति में व्यक्त कर देते हैं। लेखक गीतों की माला में छंदों के मोती अनवरत् पिरोते रहें और उनकी ख्याति के कलश में कई-कई बूंदें समाहित होती रहे।

पुस्तक : एक बूंद हम
लेखक : मनोज जैन 'मधुर'
प्रकाशक : पहले पहल प्रकाशन, भोपाल
मूल्य : रु. 240 पृष्ठ सं. : 120

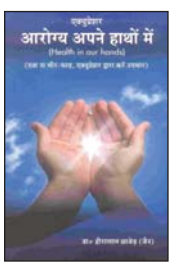

एक्युप्रेशर: आरोग्य अपने हाथों में

बरुण कुमार सिंह

आज का व्यक्ति किसी न किसी रोग से ग्रस्त है और उस रोग के साये में अपना कष्टमय जीवन बिता रहा है। ऐसे में मानवमात्र को यह सोचने के लिए बाध्य कर दिया है कि कोई ऐसी सहज-सरल, सस्ती रोगों से मुक्त करनेवाली चमत्कारिक चिकित्सा पद्धति हो, जिसके उपचार से कोई साइड इफेक्ट भी न हो। ये सभी विशेषताएं एकमात्र एक्युप्रेशर पद्धति में ही समाहित है। इसकी प्रामाणिकता स्वयं के रोगों पर प्रयोग करके ही पहचानी जा सकती है।

प्रस्तुत पुस्तक में प्रथम खण्ड में पाचन तंत्र, श्वास प्रणाली, किडनी व मूत्र संबंधित रोग, मस्तिष्क तथा स्नायु संस्थान के रोग, मेरुदंड (रीढ़ की हड्डी) से संबंधित रोग, ज्ञानेन्द्रियों के रोग, स्त्री रोग एवं द्वितीय खण्ड में सुजोक चिकित्सा पद्धति एवं तृतीय खण्ड में मंत्र चिकित्सा के माध्यम से रोग निवारण की जानकारी दी गई है।

एक्युप्रेशर का अर्थ है सही स्थान पर दबाव डालना। शरीर को निरोग करने के लिए सूई भेदन किया जाता है। शरीर के सूक्ष्म भाग का संबंध पूरे शरीर से होता है। यह उपचार पद्धति भारत में प्रचलित थी, पर आज जिस रूप में प्रचलित है उसका संबंध चीन से है। आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों में उपचार महंगे होने के कारण जनसाधारण के लिए इलाज सहज सुलभ नहीं है। ऐसी स्थिति में वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति के रूप में एक्युपंचर तथा एक्युप्रेशर इलाज की एक प्रभावी पद्धति है।

लेखक ने सरल एवं सहज शब्दों में एक्युप्रेशर के बारे में लिखा है जिसे जनसाधारण आसानी से पढ़कर वैकल्पिक चिकित्सा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता है।

पुस्तक : एक्युप्रेशर: आरोग्य अपने हाथों में
लेखक : डॉ. हीरालाल छाजेड़ 'जैन'
प्रकाशक : एक्युप्रेशर रिसर्च एण्ड हेल्थ केयर सेंटर, चौधरी बाजार, नन्दी साही, कटक (उड़ीसा)
मूल्य : रु. 100, पृष्ठ सं. : 132

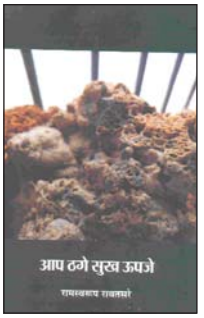

आप ठगे सुख ऊपजे

प्रेरणादायक नीतिकथाओं की आधारभित्ति पर मानवीय कर्तव्यों और उदारचेता जीवन मूल्यों की विशद् विवेचना में रामस्वरूप रावतसरे का एक विशिष्ट स्थान है। हिन्दी साहित्य में एक बहुत बड़ा वर्ग जिंदगी की वास्तविकताओं, टूटते-बिखरते जीवन मूल्यों और उसके दर्द को शब्दों में उकेरने की उनकी अदा के कायल हैं। इसी परम्परा से जुड़ी उनकी किताब 'आप ठगे सुख ऊपजे' पाठकों को एक बार फिर रावतसरे की दुनिया में ले जाती है। किताब में छोटी-छोटी नीति एवं पौराणिक कथाएं और उनसे जुड़े लेखक के मार्मिक और झकझोरने वाले विचार जिंदगी को नये तरीके से जीने की प्रेरणा देती हैं और दकियानूसी सामाजिक वर्जनाओं और परम्पराओं के खिलाफ एक अघोषित संघर्ष का आह्वान करते हैं। प्रेरणा की एक अलग आभा लिए उनके विचार पाठक को नए सपने बुनने और उन्हें साकार करने की दिशा में अग्रसर करते हैं।

बोधकथाएं/नीतिकथाएं सामान्यत: मूल्यपरक और ज्ञानबोधक होती हैं। ये कथाएं समाज में मानवोचित्त जीवन मूल्य और सांस्कृतिक आचरण की स्थापना की सशक्त माध्यम है। लेखक ने एक कदम और आगे बढ़ाते हुए इन कथाओं की पठनीयता को बहुगुणित किया है अपने विस्तृत एवं सटीक वैचारिक धरातल से। जिस तरह कबीरजी के दोहे गहरे चोट करने में समर्थ हैं उसी तरह से प्रस्तुत पुस्तक के विचार एक आइना के रूप में हर इंसान को अपना वास्तविक चेहरा दिखाने में सक्षम है। इस पुस्तक के विचारों में निराशा और मोहभंग नहीं बल्कि जीवन में भरपूर आस्था, उत्साह, आशा और शुभ भविष्य की कामना है। यह पुस्तक हर वर्ग के पाठक द्वारा पढ़ी जानी चाहिए क्योंकि इसमें जीवन-निर्माण की बात है। जीवन को उन्नत बनाने की बात है, विश्वास और सकारात्मकता के बीज सूत्र इसमें गुथे गये हैं।

पुस्तक : आप ठगे सुख ऊपजे
लेखक : रामस्वरूप रावतसरे
प्रकाशक : सागर प्रकाशन 64-ए, बैंक कॉलोनी, महेश नगर, गोपालपुरा बाईपास जयपुर (राजस्थान)
मूल्य : रु. 50, पृष्ठ सं. : 80

ललित गर्ग

धर्म-कर्म

आचार्य चंदनमुनि

आप क्या हैं? कभी सोचा!

आत्मा न कभी पैदा हुआ और न कभी इसका विनाश ही होता है। यह पहले भी था और आगे भी रहेगा। यह अनादि है, अव्यय है, शाश्वत है। आत्मा का मूल अस्तित्व सदैव विद्यमान रहता है। यह तीनों काल में नष्ट होने वाली वस्तु नहीं है। मैं पहले कौन था, आगे क्या हूंगा, वर्तमान में कौन हूं? इस स्वरूप को जो जानता है, वह आत्मा है। आत्मा के सिवाय दूसरी कोई वस्तु ज्ञात नहीं हो सकती।

स्मृति–याददाश्त और प्रत्यभिज्ञा-पहचान– ये आत्मा द्वारा ही साध्य हैं। किसी बीती वस्तु की याद आना स्मृति है। प्रत्यभिज्ञा का अर्थ पहचान से है। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति हमारे सामने आया, उसे देखने से याद आया–यह व्यक्ति अमुक समय पूर्व हमारे से मिला था। जहां चैतन्य है, ज्ञान है, वहीं स्मृति और प्रत्यभिज्ञा संभव है।

मैं हिसार में था। एक वकील आए। वे चार्वाक सिद्धांत में विश्वास करते थे, नास्तिक थे। उन्होंने पूछा–

आत्म कहां है? क्या वह प्रत्यक्ष है? बताएं।

मैने कहा–हां, प्रत्यक्ष है।

वकील–कैसे?

मैंने कहा–आप कहते हैं ''मैं हूं'' यों अहं का अनुभव करने वाला जो है, वही आत्मा है। सोचने वाली, चिंतन करने वाली वह एक ही शक्ति है, दूसरी कोई वस्तु वैसा नहीं कर सकती। इससे यह सिद्ध हुआ कि आत्मा है। आत्मा सभी प्राणियों में है। वह चींटी से लेकर पेड़-पौधे में भी विद्यमान है।

जगदीशचंद्र वसु ने यह सिद्ध कर दिया है कि पेड़ हंसते हैं, रोते हैं आदि।

स्वामी रामतीर्थ ने कहा है कि एक बड़े से बड़ा इंजन भारी भार वहन कर सकता है पर उस इंजन से भी ज्यादा अक्ल कुंथु में होती है। अगर कोई खतरे की बात आ रही है तो कुंथु अपना रास्ता बदल देगा, मगर यदि रेल की पटरी आगे से उखड़ी हो तो इंजन अपने मार्ग को नहीं बदल सकता। इसलिए चैतन्य का ज्ञान अत्यंत महत्वपूर्ण वस्तु है और वही आत्मा का स्वरूप है। चैतन्य-स्वरूप आत्मा साक्षात् है। इसमें किसी संदेह का स्थान नहीं है। हमें उसका चिंतन, पर्यालोचन एवं मनन करना चाहिए।

साधक को इस प्रकार चिंतन करना चाहिए कि जब मैं कोई भूल करता हूं तो दूसरे लोग–स्वपक्ष परपक्ष वाले सभी लोग मुझे किस दृष्टि से देखते हैं या मेरी खुद की आत्मा क्या कहती है? अथवा मैं अपनी किन-किन भूलों को अभी तक नहीं छोड़ सका हूं।

दूसरे आदमी आपको चाहे किसी भी दृष्टि से देखें किन्तु आपका अपने आपको देखना सही हो। दूसरे आपको देख रहे हैं, इससे आपका मूल्यांकन सही नहीं हो सकता। आप जो अपने आपको देखते हैं, वह सही मूल्यांकन है। दूसरों को धोखा दिया जा सकता है, अपने आपको धोखा दिया जा सकता। लोग आपको चाहे ईमानदार मान लें, सभ्य मान लें, मगर वास्तविकता क्या है, इसका सही मूल्यांकन अपनी आत्मा से होगा। इसलिए आत्मोन्मुख को यह चिंतन करना चाहिए कि वस्तुतः मैं क्या हूं, कैसा हूं?

दोषों को जानते हुए भी मैं उनसे दूर रहने का प्रयत्न करता हूं या नहीं करता, इस पर गहराई से चिंतन करना चाहिए।

उपर्युक्त तीनों बातों को जानने वाले व्यक्ति वर्तमान में जीते हैं, इन तीन बातों का वे ध्यान रखते हैं। इससे उनको जीवन में सही दिशा का बोध होता रहता है।

सैकड़ों भूलें ऐसी होती हैं, जिनको हम जानते हैं, जानते हुए भी करते हैं। जैसे कोई वासना मन में आई तो सोचते हैं कि न आई होती तो अच्छा होता। इसी प्रकार अनेक ऐसे दोष हमसे होते रहते हैं, जिनका विसर्जन हम वांछनीय मानते हैं, पर कर नहीं पाते। दोषों को जानें, उन्हें त्यागें, यह बहुत ही अच्छी बात है, पर यदि छोड़ न पायें, दोषों को दोष रूप में जान भी लें तो भी यह सुधार का मार्ग है, अच्छा है। क्योंकि जो दोष को दोष मानता है, वह, एक समय आता है, जब आत्मबल जागृत होता है, उन्हें तत्क्षण छोड़ देता है। पर जो दोष को दोष नहीं मानता, वह उन्हें कैसे छोड़ सकता है।

स्मृति में लिखा है–

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत, नरश्चरितमात्मनः।
किं नुमे पशुभिस्तुल्यं किं वा नरगणैरपि।

आदमी को प्रतिदिन अपने आचरणों को देखना चाहिए। क्या मेरा आचरण सत्पुरुषों के समान है या पशुओं जैसा है–इस पर यदि आप ध्यान देंगे तो आपके समक्ष बहुत सारी बातें आ जायेंगी। आप देखेंगे कि आप में वे मानव-भाव की अपेक्षा पशु-भाव अधिक है।

मनुष्य जैसा बाहर से दीखता है, अक्सर भीतर से वैसा नहीं होता। उसकी कथनी और करनी में बड़ा अंतर रहता है, जो उसके आत्मविकास में सर्वथा बाधक है।

एक कुत्ते को रोटी डालते हैं तो बहुत से कुत्ते आ जाते हैं और आपस में रोटी के लिए छीना-झपटी करते हैं। आदमियों में भी बहुत से लोग ऐसे हैं, जो दूसरों के हक को छीन लेने में जरा भी नहीं संकुचाते। इस तरह आप देखेंगे कि बेचारा कुत्ता तो अपनी भूख मिटाने के लिए रोटी छिनने का प्रयत्न करता है, परन्तु आदमी दूसरे की जेब काटते हैं, थोड़े से धन के लोभ में दूसरे की जान तक ले लेते हैं। आप जरा सोचें, यह पशु-भाव है या मानव-भाव?

बगुला ध्यान करने लगता है तो ऐसा प्रतीत होता है कि कोई महान तपस्वी है, पर ज्यों ही मछली उसके पास से गुजरती है–वह धर दबोचता है और उसको मार कर खा जाता है। इसी तरह धर्म के नाम पर ढोंग करने वाले मनुष्य दूसरों को धोखा देते हैं।

हम बहुत-सी योनियों को पार कर मनुष्य योनि में आ गये, मगर दुःख है कि मानव-शरीर में होते हुए भी अधिकांशतः पशुत्व के गुण हमारे अंदर विद्यमान हैं। ज्ञानी वही है, जो पशु-स्वभाव को छोड़कर आत्म-स्वभाव में आता है। उसका जीवन सुंदर और सौम्य बन जाता है। संसार में आप मानव-शरीर में आये हैं, यदि देव न बन सकें तो कम से कम मानव तो बनें। यदि आप में मानवता आ गई तो आपका उत्थान हो सकता है।

प्रस्तुति : राजेश बंसल, जयपुर

मनीष जैन

सबके लिये जीने का क्या सुख है ?

प्रसन्नता यानी खुशी एवं मुस्कान जीवन की एक सार्थक दिशा है। हर मनुष्य चाहता है कि वह सदा मुस्कुराता रहे और मुस्कुराहट ही उसकी पहचान हो। क्योंकि एक खूबसूरत चेहरे से मुस्कुराता चेहरा अधिक मायने रखता है, लेकिन इसके लिए आंतरिक खुशी जरूरी है। जीवन में जितनी खुशी का महत्व है, उतना ही यह महत्वपूर्ण है कि वह खुशी हम कहां से और कैसे हासिल करते हैं। खुश रहने की अनिवार्य शर्त ये है कि आप खुशियां बांटें। खुशियां बांटने से बढ़ती हैं और दुख बांटने से घटता हैं। यही वह दर्शन है जो हमें स्व से पर-कल्याण यानी परोपकारी बनने की ओर अग्रसर करता है। जीवन के चौराहे पर खड़े होकर यह सोचने को विवश करता है कि सबके लिये जीने का क्या सुख है?

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह सबके बीच रहता है, अत: समाज के प्रति उसके कुछ कर्तव्य भी होते हैं। सबसे बड़ा कर्तव्य है एक-दूसरे के सुख-दु:ख में शामिल होना एवं यथाशक्ति सहायता करना। बड़े-बड़े संतों ने इसकी अलग-अलग प्रकार से व्याख्या की है। संत तो परोपकारी होते ही हैं। तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में श्रीराम के मुख से वर्णित परोपकार के महत्व का उल्लेख किया है-

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥

अर्थात् परोपकार के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों को पीड़ा पहुंचाने के समान कोई अधर्म नहीं। संसार में वे ही सुकृत मनुष्य हैं जो दूसरों के हित के लिए अपना सुख छोड़ देते हैं।

एक चीनी कहावत- पुष्प इकट्ठा करने वाले हाथ में कुछ सुगंध हमेशा रह जाती है। जो लोग दूसरों की जिंदगी रोशन करते हैं, उनकी जिंदगी खुद रोशन हो जाती है। हंसमुख, विनोदप्रिय, आशपूर्ण लोग प्रत्येक जगह अपना मार्ग बना ही लेते हैं। मनोवैज्ञानिक मानते हैं खुशी का कोई निश्चित मापदंड नहीं होता। एक मां बच्चे को स्नान कराने पर खुश होती है, छोटे बच्चे मिट्टी के घर बनाकर, उन्हें ढहाकर और पानी में कागज की नाव चलाकर खुश होते हैं। इसी तरह विद्यार्थी परीक्षा में अव्वल आने पर उत्साहित हो सकता है। सड़क पर पड़े सिसकते व्यक्ति को अस्पताल पहुंचाना हो या भूखें-प्यासे-बीमार की आहों को कम करना, अन्याय और शोषण से प्रताड़ित की सहायता करना हो या सर्दी से ठिठुरते व्यक्ति को कम्बल ओढ़ाना, किन्हीं को नेत्र ज्योति देने का सुख है या जीवन और मृत्यु से जूझ रहे व्यक्ति के लिये रक्तदान करना-ये जीवन के वे सुख है जो इंसान को भीतर तक खुशियों से सराबोर कर देते हैं।

ईसा, मोहम्मद साहब, गुरु नानकदेव, बुद्ध, कबीर, गांधी, सुभाषचंद्र बोस, भगत सिंह, आचार्य तुलसी और हजारों-हजार महापुरुषों ने हमें जीवन में खुश, नेक एवं नीतिवान होने का संदेश दिया है। इनका समूचा जीवन मानवजाति को बेहतर अवस्था में पहुंचाने की कोशिश में गुजरा। इनमें से किसी की परिस्थितियां अनुकूल नहीं थी। हर किसी ने मुश्किलों से जूझकर उन्हें अपने अनुकूल बनाया और जन-जन में खुशियां बांटी। ईसा ने अपने हत्यारों के लिए भी प्रभु से प्रार्थना की कि प्रभु इन्हें क्षमा करना, इन्हें नहीं पता कि ये क्या कर रहे हैं। ऐसा कर उन्होंने परार्थ-चेतना यानी परोपकार का संदेश दिया। बुद्ध ने शिष्य आनंद को 'आधा गिलास पानी भरा है' कहकर हर स्थिति में खुशी बटोरने का संदेश दिया। मोहम्मद साहब ने भेदभाव रहित समाज का संदेश बांटा।

परोपकार को अपने जीवन में स्थान दीजिए, जरूरी नहीं है कि इसमें धन ही खर्च हो। बस मन को उदार बनाइए। आपके आसपास अनेकों लोग रहते हैं। हर व्यक्ति दु:ख-सुख के चक्र में फंसा हुआ है। आप उनके दु:ख-सुख में सम्मिलित होइए। यथाशक्ति मदद कीजिए।

परोपकार एक महान कार्य है। सबसे बड़ा पुण्य है। पहले बड़े-बड़े दानी हुआ करते थे जो यथास्थान धर्मशालाएं बनवाते थे। ग्रीष्मकाल में प्यासे पथिकों के लए प्याऊं की व्यवस्था करते थे। यह व्यवस्था आज भी प्रचलित है। योग्य गुरुओं की देखरेख में पाठशालाएं खोली जाती थीं। जिनमें नि:शुल्क शिक्षा दी जाती थी। लेकिन, अब सब व्यवसाय बन गया है, फिर भी परोपकारी कहां चुकते हैं?

जीवन केवल भोग-विलास एवं ऐश्वर्य के लिए ही नहीं है। यदि ऐसा है तो यह जीवन का अध:पतन है। आप अपनी सुख-सुविधाओं का ध्यान रखते हुए यदि परोपकार करेंगे तभी जीवन सार्थक होगा। अपनी आत्मा को पवित्र बनाकर निर्मल बुद्धि के द्वारा जग हिताय कार्य करना ही सफल जीवन है। इतिहास ऐसे महान् एवं परोपकारी महापुरुषों के उदाहरणों से समृद्ध है, जिन्होंने परोपकार के लिये अपने अस्तित्व एवं अस्मिता को दांव पर लगा दिया। देवासुर संग्राम में अस्त्र बनाने के लिए महर्षि दधीचि ने अपने शरीर की अस्थियों का दान कर दिया। जटायु ने सीता की रक्षा के लिए रावण से युद्ध करते हुए अपने प्राण की आहुति दे दी। पावन गंगा को धरती पर उतारने के लिए शिव ने पहले उसे अपनी जटाओं में धारण किया, फिर गंगा का वेग कम करते हुए उसे धरती की ओर प्रवाहित कर दिया। यदि वे गंगा के वेग को कम न करते तो संभव था कि धरती उस वेग को सहन न कर पाती और पृथ्वी के प्राणी एक महान लाभ से वंचित रह जाते। शिव तो समुद्र-मंथन से निकले हुए विष को अपने कंठ में धारण कर नीलकंठ बन गए। ये सब उदाहरण महान परोपकार के हैं। इन आदर्शों को सामने रखकर हम कुछ परहित कर्म तो कर ही सकते हैं। हमें बस इतनी शुद्ध बुद्धि तो अवश्य ही रखनी चाहिए कि केवल अपने लिए न जीएं। कुछ दूसरों के हित के लिए भी कदम उठाएं। क्योंकि परोपकार से मिलने वाली प्रसन्नता तो एक चंदन है, जो दूसरे के माथे पर लगाइए तो आपकी अंगुलियां अपने आप महक उठेगी। ■

L.M.G. ENGINEERING COMPANY

Manufacturers and Exporters of:
LIVE BRAND [ISI] MARKED HOT GALVANISED MALLEABLE PIPE FITTINGS & SCAFFOLDINGS
B-23 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

LIVE **IDOL** **IDEAL** **LIFE**

SUPREME METAL INDUSTRIES
THE MAHAVIR VALVES INDUSTRIES

NIRMAL KUMAR JAIN	+91–9888005336
SANJIV JAIN	+91–9815199268
PRASHANT JAIN	+91–9815101168

RESIDANCE: 267, ADARSH NAGAR, JALANDHAR

Manufacturers and Exporters of:
LIFE & IDEAL BRAND [ISI] MARKED GUNMETAL AND BRASS VALVES AND COCKS
C-71 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
March 2012

SHREE AADINATH TRADING COMPANY

BLACK DIAMOND MOVERS

COAL CONSULTANTS, COAL CO ORDINATORS, COAL MERCHANTS ,COAL HANDLING AGENTS

HIGHLIGHTS

- Leading Coal Handling Agents and Coordinators since 45 years.
- Complete Coal Solutions under one Roof.
- Handling bulk Coal requirements of Power Plants, Iron and Steel Plants and Paper Mills from the various subsidiaries of Coal India Ltd.
- Expertise in Coal Linkage from Ministry of Coal and Coal India Ltd.
- Expertise in Rake Loading/Unloading and Liasioning.

JAIN GROUP

Branches: Assam, Madhya Pradesh
Maharashtra, Uttar Pradesh
Uttarakhand, West Bengal
Jharkhand

CONTACT DETAILS:
Address – BJ 63, Ground Floor, Sec-2,
Salt Lake, Kolkata. (W.B)
Contact Person:
Amit Jain- +91 9412702749
Ankit Jain- +91 9830773397
blackdiamondmovers@gmail.com

If undelivered please return to:
Editor, Samridha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092